ISSN No : 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

भाग 3 अंक 2 अगस्त 2023

Society for Advancement in Agriculture, Horticulture & Allied Sectors
SAAHAS

ISSN No. 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

3/2, ड्रमण्ड रोड, (नथानी अस्पताल के सामने), प्रयागराज-211001, (U.P.) दूरभाष-9452254524
वेबसाइट : saahasindia.org, ई-मेल-contact.saahas@gmail.com
Article Submission :– krishiudyandarpan.hi@gmail.com

सम्पादकीय मण्डल

प्रधान संपादक
डॉ. विवेक कुमार त्रिपाठी
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, उद्यान विज्ञान विभाग एवं फल विज्ञान विभाग
चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

वरिष्ठ संपादक
डॉ. रोशन लाल राऊत
वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं विभागाध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, बालाघाट (एम.पी.)

सह सम्पादक गण
डॉ. नीलम राव रंगारे
वैज्ञानिक, संस्था निदेशालय
इन्दिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, लाभण्डी, रायपुर (छत्तीसगढ़)

डॉ. नंगखाम जेम्स सिंह
पशुचिकित्सक क्षेत्र सहायक,पशुपालन एवं डेयरी विभाग, शुआट्स, (उ.प्र.)

डॉ. खलील खान
मृदा वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान केन्द्र दलीप नगर कानपुर देहात, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

डॉ. प्रमिला
सहायक अध्यापक-सह-वैज्ञानिक, सब्जी विज्ञान, उद्यान विभाग
पं. दीन दयाल उद्यान एवं वानिकी महाविद्यालय, पिपरी, कोठा, बिहार

प्रखर खरे
एम.एस.सी. उद्यान विज्ञान विभाग, शुआट्स, प्रयागराज (उ.प्र.)

पांडुलिपि संपादक
स्निग्धा हल्दर
सहायक संपादक, एग्रो इण्डिया पब्लिकेशन, प्रयागराज, (उ.प्र.)

कंटैट लेखक/ स्तंभ लेखक
डॉ. विशाल नाथ पाण्डेय
विशेष कार्य अधिकारी
आई.सी.ए.आर., आई.ए.आर.आई, झारखण्ड, हजारीबाग (झारखण्ड)

फोटोग्राफी
स्वप्निल सुभाष स्वामी

वेब एडिटर
प्रितेश हलदार
प्रकाशक, एग्रो इण्डिया पब्लिकेशन, प्रयागराज, (उ.प्र.)

प्रकाशक
Society for Advancement in Agriculture, Horticulture & Allied Sectors (SAAHAS)

ISSN No. 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

इस पृष्ठ में

- **गुलाब की वैज्ञानिक खेती** 1
  प्रमिला, शिव नारायण धाकड़, लंगुटे पांडुरंग नाना एवं सोनू नागर
- **मध्य प्रदेश में बेल का उत्पादन** 4
  राहुल डोंगरे
- **पौधों हेतु प्रमुख पोषक तत्व तथा उनके उर्वरक** 10
  खलील खाँन एवं प्राची राठौर
- **खरीफ प्याज की उन्नत उत्पादन तकनीक** 15
  पी. ए. साबळे, मनीष शर्मा, किशन वाघेला, जी. एस. पटेल एवं पियूष वर्मा
- **नेपियर घास की उत्पादन तकनीक** 20
  हरिशंकर, पी. आर. बोबड़े, विजय कुमार एवं कमलेश कुमार सिंह
- **मैदानी क्षेत्रों में अधिक लाभ हेतु स्ट्रॉबेरी की वैज्ञानिक उत्पादन तकनीक** 22
  रिद्धिमा त्रिपाठी, वी. के. त्रिपाठी एवं देवी सिंह
- **ढींगरी मशरूम उत्पादनः बेरोजगार युवाओं के लिए स्टार्ट-अप के लिए एक आदर्श घटक** 27
  रघुवीर सिंह एवं अश्विनी सूर्यवंशी
- **कृषि पर्यटनः आय का नया स्त्रोत** 28
  प्रदीप कुमार, उपासना चौधरी, नीतू एवं प्रमिला
- **अनार उत्पादन तकनीक** 32
  एन. आर. रंगारे, एस. के. पाण्डे, अनय रावत एवं टी. आर. शर्मा
- **शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र में करें बेल की खेती** 36
  आनंद साहिल, उपासना चौधरी एवं नितिन मुकेश
- **जैविक खेती** 40
  संज्ञा पयासी, ओपेन्द्र कुमार सिंह, आशुतोष मिश्र, उमाशंकर मिश्र एवं पावन सिरोठिया
- **परवल, कुन्दरू एवं ककोड़ा (खेखसा): महत्त्व एवं प्रवर्धन** 43
  प्रमिला, उदित कुमार एवं कृष्ण कुमार शर्मा
- **खस की खेती की संभावनायें एवं उसके लाभ** 46
  अंकित पाण्डेय एवं एस. सी. तिवारी

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखकों के निजी हैं। प्रकाशित/सम्पादक इसके लिये उत्तरदायी नहीं है। इस पत्रिका से सम्बन्धित वाद का निस्तारण क्षेत्र प्रयागराज होगा।*

ISSN No. 2583-3316

- **फलोद्यान से लंबे समय तक अधिक लाभ हेतु वैज्ञानिक ढंग से रेखांकन, नियोजन एवं प्रबंधन** 50
  रिद्धिमा त्रिपाठी एवं वी. के. त्रिपाठी
- **कृषि के लिए महत्वपूर्ण मृदा परीक्षण** 54
  खलील खाँन एवं गौरव शुक्ला
- **वैज्ञानिक तरीके से करें आंवला की खेती** 58
  आनंद साहिल, शीतल रावत, लोकेश कुमार एवं शिवानी यादव
- **गुणवत्तापूर्ण अमरूद उत्पादन के लिए बरसात में फल मक्खी का प्रबंधन** 62
  मनीष कुमार, कुमारी कुसुम एवं इमामुद्दीन शाह
- **सब्जी फसलों में बीज प्राइमिंग/प्राथमिकी का महत्व** 67
  निखिल ठाकुर, जसदीप कौर, दीपा शर्मा, आकृति एवं मीनाक्षी

ISSN No. 2583-3316

गुलाब की वैज्ञानिक खेती

प्रमिला*, शिव नारायण धाकड़, लंगुटे पांडुरंग नाना एवं सोनू नागर

उद्यान विज्ञान विभाग, डॉ राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय पूसा, समस्तीपुर, बिहार

पत्राचारकर्ता: prmtca@gmail.com

परिचय

गुलाब एक अनमोल फूल है, जिसे उसकी आकर्षक बनावट, सुन्दर आकार, लुभावना रंग, दूसरे फूलों की अपेक्षा अधिक उपयोगी बनाती है। गुलाब की खेती यदि वैज्ञानिक विधि द्वारा की जाए तो पूरे वर्ष भर गुलाब के फुल प्राप्त किये जा सकते हैं। गुलाब के पौधों छोटे से लेकर बड़े आकार के झाड़ीनुमा होते हैं। इसके फूल अपनी सुन्दरता के कारण पुष्प के रूप में, फूलदान को सजाने के लिए, कमरे की सजावट के लिए, गुलदस्ता बनाने व बटन होल बनाने के अतिरिक्त धार्मिक पूजा तथा त्योहारों पर भी उपयोग में लाया जाता है। वर्त्तमान में गुलाब का उपयोग वेलेन्टाईन्स डे पर अधिक प्रचलित है। गुलाब के फूलों से कई प्रकार के मुल्यवर्धित उत्पाद भी बनाये जाते हैं, जिसमें से गुलाब जल, इत्र और गुलकन्द महत्त्वपूर्ण उत्पाद हैं।

गुलाब की खेती के लिए उपयुक्त जलवायु व मृदा

जलवायु : गुलाब की खेती के लिए ठंड (शीत ऋतु) अधिक उपयुक्त होती है। जब ठंडी जलवायु होती है तो गुलाब के फूलों की गुणवत्ता बहुत अच्छी होती है। दिन का तापमान 25-30 डिग्री सेन्टीग्रेट तथा रात का तापमान 12-14 डिग्री सेंटीग्रेट उत्तम माना जाता है। ठंडी के मौसम में गुलाब के फूल अत्यन्त सुन्दर और उच्च गुणवत्ता वाले होते हैं। हांलाकि, बहुत अधिक ठंडी जलवायु गुलाब के फूलों को क्षति पहुँचा सकती है और फूलों को खिलने में भी रूकावट बन सकती है। इन सब समस्या के समाधान हेतु पर्याप्त गर्मी, ऊर्जा तथा पानी (सिंचाई) प्रक्रिया का उपयोग किया जा सकता है।

मृदा: गुलाब की खेती को लगभग सभी प्रकार की मृदा में उगाया जा सकता है, लेकिन दोमट, बलुई दोमट या मटियार दोमट जैसी मिट्टियों में जहाँ ह्युमस की अधिक मात्रा में होती है, ऐसी मृदा उपयुक्त होती है। सामान्यतः 6.5 पी.एच. से 7.0 पी.एच. मान वाली मृदा गुलाब के पौधों के लिए अच्छी रहती है। इसके साथ ही, पौधों के उचित विकास के लिए छायादार वातावरण व जल निकास की सुविधा आवश्यक होती है।

गुलाब की महत्तवपूर्ण किस्में: गुलाब की किस्मों में मुख्यतः पूसा सोनिया, सुपर स्टार, गोल्डमेडल, रानी साहीबा, नूरजहाँ, मनीपोल, क्रिमसन ग्लोरी, किस ऑफ फायर, ग्लैडिएटर, अमेरिकन होम, बन्जारन, हैपीनेस सान्द्रा आदि महत्तवपूर्ण व अधिक उत्पादकता वाली किस्में हैं।

भारत में मुख्यतः पूसा सोनिया, प्रियदर्शनी, प्रेमा, मोहिनी, बन्जारन, डेलही प्रिन्सेज आदि उगाई जाती है तथा सुगन्धित तेल के लिए नूरजहाँ, डमस्क आदि किस्में उगाई जाती है।

गुलाब के 5 मुख्य वर्ग हैं, जिसको फूलों के रंग, आकार, सुगंध और प्रयोग के अनुसार-विभाजन किया गया है।

ISSN No. 2583-3316

क्रम संख्या	वर्ग	भारतीय किस्में	विदेशी किस्में
(क)	हाईब्रिड टी वर्ग	पूर्णिमा, पूसा सोनिया,प्रियदर्शिनी, अभिसारिका, अभय	सुपर स्टार, फस्ट प्राइज
(ख)	फ्लोरीबिंड़ा वर्ग	बंजारन, कुम कुम, मोहिनी, सूर्यकिरण, अरुणिमा, रानीसाहिबा	प्ले बॉय, कॉन्फेटी, समर स्नो
(ग)	मिनिएचर वर्ग	चंद्रिका, चुनमुन, दिल्ली स्टारलेट,पुष्कला	गैलकाक्सी, राइज एंड शाइन
(घ)	पोलिएन्था वर्ग	बरनी, प्रीति, अंजलि, रश्मी	मे वंडर, पिंक शावर्स
(ङ)	लत्ता वर्ग	क्लाइम्बिंग रंबा, क्लाइम्बिंग मातंगी,	स्नो गार्डन

(क) हाईब्रिड टी वर्ग: इसमें बड़े-बड़े फूल होते है और झारियां भी बहुत लम्बे घने होते है। इसकी एक और खास बात ये है की इसकी हर एक तने में एक फूल जरुर से निकलते है।

(ख) फ्लोरीबंड़ा वर्ग: फ्लोरीबंडा, हाइब्रिड टी के मुताबिक फ्लोरीबंडा किस्मो के फुल छोटे-छोटे होते है और इस किस्म के फूल एक साथ बहुत ज्यादा नहीं लग पाते है।

(ग) पोलिएन्था वर्ग: पोलिएन्था, किस्म के फूलों का आकार हाइब्रिड टी और फ्लोरिबंडा से छोटा होता है लेकिन गुच्छा आकार में फ्लोरीबंडा किस्म से भी बड़ा होता है।

(घ) मिनिएचर वर्ग: मिनिएचर, इस किस्म के पौधे को आप अपने घर पर भी गमले में लगा सकते है। इसके फूल और पत्ते दोनों हीं छोटे-छोटे होते है।

(ड) लत्ता वर्ग: लता गुलाब, हाइब्रिड टी और फ्लोरिबंडा गुलाबों की शाखाएँ लताओं की जैसे बढ़ती जाती है, जिसके कारण उन्हें लता गुलाब भी कहा जाता है।

गुलाब का प्रवर्धन: गुलाब मुख्यतः कलिकायन (बडिंग) विधि द्वारा किया जाता है। नयी किस्में बीज द्वारा तथा पुरानी किस्मों का प्रसारण कलिकायन विधि, कलम विधि (ग्राफ्टिंग), काट विधि (कटिंग) विधि से किया जाता है।

कलिकायन विधि द्वारा प्रसारण करने के लिए मूल रूप (रूटस्टाक) को पहले तैयार करना पड़ता है। इसके लिए जुलाई-अगस्त माह में कटिंग लगाना चाहिए, ताकि दिसम्बर-जनवरी माह तक कलिकायन (बडिंग) करने योग्य पौधे तैयार हो सके।

कलिकायन (बडिंग)

तैयार किये गये मूल रूप (रूटस्टाक) के पौधे में से नयी शाखा लगभग पेन्सिल की मोटाई जितनी हो,का चुनाव करना चाहिए। अब इन चुनी हुई शाखाओं में जमीन से लगभग 15-20 सें.मी. ऊपर टी (T) आकार का चीरा लगाकर (2.5 से.मी. लम्बवत तथा 1.25 से.मी. ऊपर सामानान्तर) कलिकायन किया जाता है। इसके बाद मातृ पौधे से लगभग 2.5 से.मी. लम्बी ढ़ाल आकार में छिलके सहित कलिका को चाकू से काट लिया जाता है तथा इस कलिका को टी (T) आकार के चीरे में घुसाकर पॉलीथीन पट्टी से बाँध दिया जाता है।

कलिकायन के लिए मुलरूप (रूटस्टॉक) तैयार करना

मुलरूप (रूटस्टॉक) तैयार करने के लिए एडवर्ड (रोजा बोर्बोनिआना) किस्म भारत में महत्तवपूर्ण किस्म है। जबकि रोजा मल्टीफ्लोरा या रोंजा इण्डिका पाऊडरी मिल्डयु रोधी किस्म का भी चुनाव किया जा सकता है।

पौधों में से स्वस्थ टहनी, जो लगभग पेन्सिल की मोटाई के आकार की तथा लगभग 15-20 से.मी. लम्बाई को सिकेटियर से काटकर निचले भाग पर जड़ वर्धक पाऊडर रूटेक्स, सुरूटेक्स, स्टाडिक्स तथा केराडिक्स आदि से उपचारित कर बालू व वर्मीकुलाइट मृदा में लगा देते हैं तथा नमी बनाये रखते हैं।

खाद एव उर्वरक

गुलाब के नये पौधों को रोपन से पहले गड्ढे में आधा भाग मिट्टी तथा आधा भाग गोबर की खाद व केचुँए की खाद मिलाकर गड्ढे को भरना चाहिए तथा इसके लिए 8-10 टन पकी हुई गोबर खाद तथा 100:80:60 प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटाश पौधों के अच्छे विकास के लिए आवश्यक है। रोपाई के समय नाइट्रोजन की आधी तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी खुराक मिट्टी में मिलाकर देना चाहिए और शेष आधी नाइट्रोजन रोपाई के 30 दिनों के बाद देना चाहिए।

ISSN No. 2583-3316

रोपाई

गुलाब के पौधों की रोपाई के लिए उपयुक्त समय सितम्बर के अन्त से अक्टूबर तक का महीना होता है। बड़े आकार के गुलाब के पौधों को 60-90 सें.मी. तथा छोटे आकार वाले पौधों को 30-45 सें.मी. की दूरी पर रोपाई की जाती है। रोपाई के पहले गुलाब के पौधों की सभी पतली टहनियों को काटकर हटा दिया जाता है, केवल 3-4 स्वस्थ टहनियों को ही रखा जाता है।

कटाई-छंटाई (प्रूनिंग)

कटाई: छटाई की क्रिया गुलाब पौधे से अच्छे आकार के फुल प्राप्त करने के लिए अतिआवश्यक होती है। कटाई-छटाई के लिए अक्टूबर-नवम्बर का महीना उपयुक्त है। गुलाब की कुछ किस्में जैसे की हाइब्रिड-टी गुलाब के पौधों में गहरी छटाई तथा अन्य में हल्की कटाई-छटाई की जाती है। इसके अतिरिक्त सभी कमजोर एवं बीमारीयुक्त शाखाओं को भी काटकर हटा दिया जाता है।

विंटरिंग: गुलाब पौधों की कटाई-छटाई के तुरन्त बाद विंटरिंग की क्रिया की जाती है। इस क्रिया में 30-40 से.मी. व्यास व 15-20 से.मी. गहराई की मिट्टी को निकालकर 7-10 दिन तक जड़ो को खुला छोड़ दिया जाता है, उसके बाद खाद एवं मिट्टी मिलाकर गढ्ढे को फिर से भरकर सिंचाई की जाती है।

निराई: गुड़ाई व सिंचाई- निराई-गुड़ाई व सिंचाई आवश्यकतानुसार समय-समय पर करनी चाहिए। मौसम के अनुसार खेत में नमी बनाये रखने के लिए गर्मी में 4-6 दिन के अन्तराल पर तथा ठण्डी के दिनों में 12-15 दिन के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार सिंचाई की जाती है। खेत को हमेशा खरपतवार से मुक्त रखना चाहिए।

गुलाब की कटाई (हार्वेस्टिंग) तथा पैकिंग: जब पुष्प कली का रंग दिखाई दे ताकि कली कसी हुई हो तब सुबह या सांयकाल पुष्प डंठल को तेज चाकू से काटकर पानी युक्त बाल्टी में रखना चाहिए। इसके बाद 20-20 डंठल बनाकर तथा इसे अखबार में लपेटकर रबर बैण्ड से बाँध देना चाहिए। इसके बाद इसे कोरोगेटेड बक्से में पैक कर बाजार भेजा जा सकता है।

उपज: गुलाब के प्रति पौधें से लगभग 25-30 फूल की उपज होती है तथा औसतन एक एकड़ से 5000 पौधो से लगभग 1,50,000 गुलाब के फूल पैदा होते हैं।

गुलाब के पौधों की कीटों व रोगों से सुरक्षा

शीर्षारंभी क्षय रोग (डाइबेक): यह कवक जनित रोग है, जो की डिप्लोडियारोजीथम नामक कवक से होता है। यह पौधों के ऊपरी भाग से नीचे की ओर फैलता है। सामान्यतः शाखाओं की कटाई के बाद कटे हुए स्थान से आगे बढ़ते जाता है और पौधे मर जाते हैं।

इस रोग के उपचार हेतु रोगग्रस्त शाखाओं को काटकर 0.1 प्रतिशत की दर से बाविस्टीन का छिड़काव करना चाहिए।

चूर्णिल आसिता या छछिया रोग (पाऊडरी मिल्डयु): यह कवक जनित रोग है, जो की पोडोस्फेरा पेनोसा नामक कवक से होता है। यह रोग शीत व शुष्क मौसम में अधिक फैलता है। इस रोग के कारण पौधों की पत्तियों पर सफेद पाऊडर जैसी परत जम जाती है। इसके साथ ही साथ कलियों पर भी इसके लक्षण दिखाई देते हैं, जिससे कलियाँ मुरझाने लगती है।

इसके उपचार हेतु सल्फर 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए तथा कार्बेडाजिम का 0.1 प्रतिशत तथा केराथेन 0.15 प्रतिशत की दर से छिड़काव करना चाहिए।

काला धब्बा रोग: यह रोग डिप्लोकार्पन रोजेई कवक द्वारा फैलता है। इसके अतिरिक्त मृदा में पोटाश की कमी धब्बे दिखाई देते हैं

इस रोग के उपचार के लिए डायथेम एम-45 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें व कार्बेन्डाजिम 0.1 प्रतिशत की दर से छिड़काव करना चाहिए।

तने का अंगमारी रोग (ब्लाइट): यह रोग बोटराइटीस सिनेरेरिया नामक कवक से होता है। इस रोग के कारण तने पर छोटे-छोटे बादामी रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। इस रोग के उपचार हेतु डाइनोकेप 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर 2-3 बार छिड़काव करें।

प्रमुख कीट: गुलाब के पौधों में मुख्यतः दीमक, रेड़ स्केल, जैसिड़, थ्रिप्स आदि से नुकसान अधिक होता है। दीमक पौधों को बचाने के लिए थीमेट 10 प्रतिशत या क्लोरपाइरीफॉस (25 प्रतिशत) 2.5 -5 मि.ली. प्रति 10 वर्ग मीटर की दर से मिट्टी में मिलाये तथा रेड़ स्केल व जैसिड़ उपचार हेतु सेविन 0.3 प्रतिशत या मेलाथियॉन 0.1 प्रतिशत का छिड़काव करें।

ISSN No. 2583-3316

मध्य प्रदेश में बेल का उत्पादन

राहुल डोंगरे

वानिकी विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर

पत्राचारकर्ता: dongre.jnau@gmail.com

परिचय

बेल (*Aegle Marmelos Correa*) भारत की महत्वपूर्ण औषधीय और स्वदेशी फलों की फसल में से एक है। यह रूटेसी परिवार से संबंधित है। स्थानीय रूप से, इसे अलग-अलग भाषाओं में अलग-अलग नामों से जाना जाता है, जैसे बेल फल, भारतीय बेल, पवित्र फल, गोल्डन सेब, हाथी सेब, बंगाल क्विंस, इंडियन क्वीन। पहाड़ी और मैदानी इलाकों के सूखे जंगलों में *एगलमार्मेलोस* अच्छी तरह से उगते हैं और दुनिया भर में इसकी खेती की जा सकती है। यह पूर्वीघाट और मध्य भारत में मूल रूप से भारत का मूलनिवासी है। इस पेड़ का उल्लेख प्रागैतिहासिक पांडुलिपियों में 800 ईसा पूर्व से किया गया है। 1629 ई. में अपने भारत दौरे के दौरान चीनी बौद्ध तीर्थ यात्री ह्वेनसांग ने इस वृक्ष की उपस्थिति देखी। (शर्मा और दुबे, 2013)। बेल नेपाल, म्यांमार, तिब्बत, वियतनाम, लाओस, कंबोडिया, श्रीलंका, बांग्लादेश, थाईलैंड, इंडोनेशिया, मलेशिया, जावा, फिजी, सूरी नाम और त्रिनिदाद के साथ-साथ मिस्र के कुछ बागानों में भी उगाई जाती है।

मध्य प्रदेश में क्षेत्र और उत्पादन

भारत सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2019-20 में मध्य प्रदेश में लगभग 73,000 मीट्रिकटन और 2020-21 में 15,102 मीट्रिक टन बेल फल का उत्पादन हुआ। गौरतलब है कि मध्य प्रदेश में बेल के फलों का उत्पादन मुख्य रूप से छिंदवाड़ा और बालाघाट जिलों में केंद्रित है, जो राज्य के बेल उत्पादन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। इसके अतिरिक्त, बेल की खेती महाराष्ट्र, गुजरात और राजस्थान सहित भारत के अन्य राज्यों में भी की जाती है। राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड, कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार के आंकड़ों के अनुसार, मध्य प्रदेश राज्य देश में बेल फल के प्रमुख उत्पादकों में से एक है। मध्य प्रदेश में छिंदवाड़ा, सिवनी, जबलपुर और नरसिंहपुर जिले प्रमुख बेल उत्पादक जिले हैं।

मध्य प्रदेश में बेल की स्थिति

क्र.सं.	वर्ष	उत्पादन (000) टन	हिस्सा (%)
1	2021-22	2.01	2.45
2	2020-21	1.76	2.14
3	2019-20	1.63	1.99
4	2018-19	1.64	2.04
5	2017-18	1.55	1.75
6	2016-17	1.47	1.70
7	2015-16	1.46	1.70

स्रोतः राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड (एनएचबी)

मध्य प्रदेश में बेल उत्पादन को बढ़ावा देना

मध्य प्रदेश सरकार बेल की खेती को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न पहल कर रही है, जैसे कि नये बागों की स्थापना के लिए सब्सिडी प्रदान करना, बेल की अधिक उपज देने वाली और रोग प्रतिरोधी किस्मों का वितरण और वैज्ञानिक खेती प्रथाओं पर किसानों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना। बेल के निर्यात की अच्छी संभावनायें हैं और सरकार भी किसानों को बेल उत्पादों के लिए निर्यात बाजार तलाशने के लिए प्रोत्साहित कर रही है। मध्य प्रदेश सरकार ने राज्य में बेल फल की खेती को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न योजनाओं और कार्यक्रमों को लागू किया है। ऐसी ही एक योजना बागवानी विकास योजना है, जो बेल सहित विभिन्न बागवानी फसलों की खेती के लिए किसानों को वित्तीय सहायता और तकनीकी सहायता प्रदान करती है। इस योजना के तहत, सरकार गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री, ड्रिप सिंचाई प्रणाली और अन्य बागवानी आदानों की खरीद के लिए सब्सिडी प्रदान करती है। यह योजना किसानों को बेल की खेती में उनके ज्ञान

ISSN No. 2583-3316

और कौशल में सुधार के लिए प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण कार्यक्रम भी प्रदान करती है। इसके अलावा मध्य प्रदेश राज्य कृषि उद्योग विकास निगम लिमिटेड (एम.पी.एग्रो) ने भी बेल प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन के लिए एक योजना शुरू की है। यह योजना उद्यमियों को रस निष्कर्षण इकाइयों, लुगदी बनाने वाली इकाइयों और सूखे फल उत्पादन इकाइयों जैसे बेल प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता और तकनीकी सहायता प्रदान करती है। कुल मिलाकर, मध्य प्रदेश सरकार अत्यधिक आर्थिक और पोषण क्षमतावाले बेल फल की खेती और प्रसंस्करण को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न उपाय कर रही है। किसानों को बेल के फल का उत्पादन करने के लिए मनाने के लिए, आपको उन्हें बेल की खेती के लाभों के बारे में शिक्षित करना होगा और यह कैसे उनके लिए लाभदायक हो सकता है। यहाँ कुछ कदम दिए गए हैं।

शोध

बेल के फल की खेती के बारे में जानकारी इकट्ठा करें, जिसमें इसकी आवश्यकतायें, विकास चक्र और बाजार की माँग शामिल है। यह जानकारी आपको किसानों को बेल की खेती में शामिल होने की स्पष्ट तस्वीर प्रदान करने में मदद करेगी।

खेत के दौरे

उन खेतों के दौरे की व्यवस्था करें जहाँ पहले से ही बेल के फल की खेती हो रही है। इससे किसानों को एक बेहतर विचार मिलेगा कि क्या अपेक्षा की जायें और वे अन्य किसानों के अनुभवों से सीख सकते हैं।

वित्तीय प्रोत्साहन

किसानों को बेल की खेती शुरू करने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए वित्तीय प्रोत्साहन प्रदान करें। इसमें सब्सिडी, ऋण और बाजारों तक पहुँच शामिल हो सकती है।

प्रशिक्षण सत्र

किसानों को बेल की खेती के सर्वोत्तम तरीके सिखाने के लिए प्रशिक्षण सत्र आयोजित करें। इसमें मिट्टी की तैयारी, सिंचाई, कीट नियंत्रण और कटाई जैसे विषय शामिल हो सकते हैं।

लाभप्रदता

किसानों को दिखायें कि बेल की खेती कैसे लाभदायक हो सकती है। इसमें उन्हें बेल फल की बाजार माँग, बेल फल बेचने से होने वाली संभावित आय और उनके फसल पोर्ट फोलियो में विविधता लाने के दीर्घकालिक लाभ दिखाना शामिल हो सकता है।

विपणन

बेल के फलों को स्थानीय बाजारों में बेचा जा सकता है या अन्य देशों में निर्यात किया जा सकता है। सफल विपणन के लिए उचित पैकेजिंग, लेबलिंग और परिवहन महत्वपूर्ण हैं। यह मानते हुए कि आप बेल से संबंधित किसी उत्पाद या सेवा का विपणन करने की बात कर रहे हैं, जो आमतौर पर दक्षिण एशियाई देशों में पाया जाने वाला फल है, यहाँ कुछ संभावित विपणन समस्यायें हैं, जिनका आप सामना कर सकते हैं और उनसे निपटने के लिए कुछ सुझाव हैं:

जागरूकता की कमी

बेल दक्षिण एशिया के बाहर एक प्रसिद्ध फल नहीं है, इसलिए मुख्य चुनौतियों में से एक आप के लक्षित दर्शकों के बीच इसके बारे में जागरूकता पैदा करना हो सकता है। इसे संबोधित करने के लिए, आप शैक्षिक सामग्री जैसे ब्लॉगपोस्ट, वीडियो या सोशलमीडिया पोस्ट का उपयोग करने पर विचार कर सकते हैं, जो बेल के लाभों और उपयोगों की व्याख्या करते हैं। आप प्रचार करने में मदद करने के लिए स्वास्थ्य या पोषण क्षेत्र में प्रभावित करने वालों या विशेषज्ञों के साथ साझेदारी करने का भी प्रयास कर सकते हैं।

सीमित बाजार

कुछ देशों या क्षेत्रों में बेल का सीमित बाजार हो सकता है, जिससे बड़े दर्शकों तक पहुँचना मुश्किल हो सकता है। इस मामले में, आप आला बाजारों पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं जैसे स्वास्थ्य के प्रति जागरूक उपभोक्ता, पारंपरिक चिकित्साया आयुर्वेद में रुचि रखने वाले लोग, या विदेशी या असामान्य फलों की तलाश करने वाले।

मूल्य निर्धारण

बेल अन्य अधिक सामान्यतः उपलब्ध फलों की तुलना में अधिक महँगा हो सकता है, जो कुछ उपभोक्ताओं के लिए प्रवेश में बाधा बन सकता है। इसे संबोधित करने के लिए, आप बेल को एक प्रीमियम या विशेष उत्पाद के रूप में स्थापित करने का प्रयास कर सकते हैं, इसके अद्वितीय स्वाद, पोषण संबंधी लाभों या सांस्कृतिक महत्व पर प्रकाश डाल सकते हैं।

वितरण

बेल सभी बाजारों में व्यापक रूप से उपलब्ध नहीं हो सकता है, इसलिए आपको इसे वितरित करने के रचनात्मक तरीके खोजने की आवश्यकता हो सकती है। इसमें स्थानीय वितरकों या आयातकों के साथ काम करना, ऑनलाइन बिक्री करना, या रेस्तरां या कैफे के साथ साझेदारी करना शामिल हो सकता है, जो अपने मे नूमें बेल का उपयोग कर सकते हैं।

सोशल मीडिया

सोशल मीडिया खाद्यउद्योग में विपणन के लिए एक शक्तिशाली उपकरण हो सकता है। अपने उत्पादों को प्रदर्शित करने और अपने दर्शकों के साथ जुड़ने के लिए इंस्टाग्राम और फेसबुक जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म का उपयोग करने पर विचार करें।

मध्य प्रदेश में बेल उत्पादन की सीमायें

प्रौद्योगिकी तक पहुँच का अभाव: मध्य प्रदेश में कई छोटे किसानों की नवीनतम कृषि तकनीकों और प्रथाओं तक पहुँच नहीं हो सकती है, जो बेल उत्पादन में सुधार कर सकते हैं, जैसे कि सिंचाई प्रणाली, उच्च उपज देने वाली बेल की किस्में और कीट और रोग प्रबंधन तकनीकें।

अपर्याप्त बुनियादी ढाँचा: सड़कों, भंडारण सुविधाओं और बाज़ार से जुड़ा व सहित उचित बुनियादी ढाँचे की कमी, किसानों के लिए अपनी बेल की उपज को बाज़ार में ले जाना और बेचना मुश्किल बना सकती है, जिससे लाभप्रदता कम हो जाती है और बाज़ार के अवसर सीमित हो जाते हैं।

किसानों के बीच सीमित जागरूकता: मध्य प्रदेश में कई किसानों को बेल की खेती के संभावित लाभों के बारे में पता नहीं हो सकता है या बेल के पेड़ को प्रभावी ढंग से उगाने के लिए आवश्यक ज्ञान और कौशल नहीं हो सकता है। यह बेल की खेती को अपनाने के लिए सीमित कर सकता है और इसके परिणाम स्वरूप उपज और गुणवत्ता कम हो सकती है।

कम माँग: हालांकि भारत के कुछ क्षेत्रों में बेल के फल लोकप्रिय हैं, लेकिन देश के अन्य हिस्सों और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बेल के फलों की माँग सीमित हो सकती है, जो मध्य प्रदेश में बेल उत्पादन की लाभप्रदता को प्रभावित कर सकती है।

मध्य प्रदेश में बेल उत्पादन का भविष्य का दायरा

बेल एक उष्णकटिबंधीय फल का पेड़ है, जो गर्म और नम मौसम में पनपता है और अच्छी जल निकासी वाली, दोमट मिट्टी में अच्छी तरह से बढ़ता है। मध्य प्रदेश में एक उष्णकटिबंधीय जलवायु है, जिसमें जून से सितंबर तक मानसून का मौसम होता है और औसत तापमान 25-30 डिग्री सेल्सियस होता है। स्वस्थ और जैविक खाद्यपदार्थों की बढ़ती माँग के साथ, बेल के फलों और उनसे बने उत्पादों, जैसे जूस, जैम और पल्प की माँग भी बढ़ने की उम्मीद है। बेल अपने विभिन्न स्वास्थ्य लाभों के लिए जाना जाता है, जिसमें पाचन में सुधार, प्रति रक्षा को बढ़ावा देने और विभिन्न बीमारियों का इलाज करने की क्षमता शामिल है। मध्य प्रदेश में बेल के उत्पादन और प्रसंस्करण को बढ़ावा देने के लिए राज्य सरकार बेल की खेती और प्रसंस्करण में लगे किसानों और उद्यमियों को वित्तीय प्रोत्साहन और सब्सिडी प्रदान कर सकती है। वेतकनी की सहायता और प्रशिक्षण कार्यक्रम भी प्रदान कर सकते हैं ताकि किसानों को उनकी उत्पादन पद्धतियों में सुधार करने और उनकी उपज बढ़ाने में मदद मिल सके। किसानों को बाजारों तक पहुँचने और उनकी उपज के लिए बेहतर मूल्य प्राप्त करने में मदद करने के लिए राज्य प्रसंस्करण इकाइयाँ और बाजार लिंकेज भी स्थापित कर सकता है। सही समर्थन और निवेश के साथ, मध्य प्रदेश में बेल उत्पादन में एक आकर्षक व्यवसाय बनने की क्षमता है, जो राज्य की अर्थव्यवस्था में योगदान देता है और इसके निवासियों के लिए रोजगार के अवसर प्रदान करता है।

बेल की उत्पादन तकनीक

मिट्टी और जलवायु

बेल को उच्च तापमान को सहन करने और गर्मियों के दौरान इसकी पत्तियों को गिरकर न्यूनतम मिट्टी की नमी व्यवस्था के लिए एक प्राकृतिक उपहार के साथ प्रदान किया जाता है। हालांकि, युवा पौधों को 40 डिग्री से ल्सियस से नीचे के तापमान और गर्म हवाओं से बचाने की जरूरत है। यह 5.0 से 10.00 तक पीएच रेंज वाली दलदली, क्षारीय और पथरीली मिट्टी में अच्छी तरह से पनप सकता है, जहाँ कई अन्य फलों के पेड़ स्थापित करने में विफल रहते हैं। इसे लवणीय, क्षारीय और रेतीली बंजर भूमि में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है, बशर्ते मिट्टी को रोपण से पहले जिप्सम और पाइराइट से उपचारित किया जाये। थारमरु स्थल के नीचे बेल के पौधों की कठोरता की सीमा यह देखी गई है कि 2-3 महीने तक रेत के नीचे दबे रहने के बाद भी पौधा खुद को फिर से जीवंत करने में सक्षम है और 9 डीएसएम-1 तक लवणता को सहन कर

ISSN No. 2583-3316

सकता है। हालांकि, अच्छी जल निकासी वाली रेतीली दोमट मिट्टी बेल के बागों के लिए आदर्श रूप से उपयुक्त होती है

बेल की उन्नत किस्में

नरेंद्र बेल-5, नरेंद्र बेल-7, नरेंद्र बेल-9, नरेंद्र बेल-16 और नरेंद्र बेल-17 एन.डी. कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, फैजाबाद, उत्तर प्रदेश

- पंतअपर्णा, पंत सुजाता, पंत शिवानी और पंत उर्वशी, जी. बी. पंत. कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराखंड
- सी आई एस एच बी-1 और सी आई एस एचबी-2 आई सी ए आर-सेंट्रल इंस्टीट्यूट फॉर सब-ट्रॉपिकल हॉर्टिकल्चर, लखनऊ, उत्तरप्रदेश
- गोमायशी, थार दिव्या और थारनील कंङ्क केंद्रीय बागवानी प्रयोग केंद्र (आई सीए आर-सीआईएएच), वेजलपुर (गोधरा), गुजरा

प्रवर्धन

पौधे का प्रवर्धन परंपरागत रूप से बेल का प्रवर्धन बीज द्वारा किया जाता था। बीज प्रसार केवल रूट स्टॉक को बढ़ाने के लिए सीमित है। केवल वानस्पतिक साधनों के माध्यम से सही प्रकार की रोपण सामग्री का उत्पादन किया जा सकता है। वानस्पतिक प्रसार तकनीकों में; बडिंग, ग्राफ्टिंग, लेयरिंग और **रूटसकर** बेल के गुणन के सामान्य तरीके थे। आजकल बेल के गुणन के लिए पैच-बडिंग और सॉफ्ट-वुड ग्राफ्टिंग को व्यावसायिक रूप से अपनाया जा रहा है।

बीज प्रसार

बेल के बीज में कोई निष्क्रियता नहीं होती है; इसलिए निष्कर्षण के 10-15 दिनों के भीतर ताजे बीजों को नर्सरी में 2-3 सेमी गहराई में बोया जा सकता है। गर्मियों में बुवाई के 8-15 दिन बाद ताजा बेल के बीज अंकुरित हो जाते हैं। चूँकि, बेल अड़ियल श्रेणी से संबंधित है; बीजों को सामान्य भंडारण स्थितियों के तहत अधिक समय तक संग्रहीत नहीं किया जा सकता है। पौधे बसंत या अगले मानसून में रोपाई के लिए तैयार हो जाते हैं। यदि बीज बहुत गहरा बोया जाता है, तो अंकुर निकलने में देरी होती है और खराब वातन के कारण सड़ने की संभावना हो सकती है। अंकुरों द्वारा उगाया गया **बाग टाइप करने** के लिए सही नहीं है और परिवर्तनशीलता प्रदर्शित करता है। कभी-कभी बीज अंकुरित हो जाते हैं जबकि पेड़ के पकने के बाद फल लंबे समय तक पेड़ पर लगे रहते हैं (विविपरी)।

नर्सरी में रूटस्टॉक्स को उगाना

आमतौर पर बुवाई के लिए ताजे निकाले गए बीजों का उपयोग किया जाता है, हालांकि, यदि आवश्यक हो तो इन्हें उचित उपचार के साथ 132 दिनों तक संग्रहीत किया जा सकता है। बेहतर अंकुरण, उच्च उत्तर जीविता और स्थापना के लिए पॉलीथीन की थैलियों में बीज बोने से पहले अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर खाद को मिट्टी में मिला देना चाहिए। नर्सरी उगाने के लिए कवकनाशी उपचार के बाद उठी हुई क्यारियों में बीज निकालने के 10-15 दिनों के भीतर नर्सरी में 2 सें.मी. की गहराई में बीज बोए जा सकते हैं। मिट्टी, गोबर खाद और बालू (2:1:1) के अनुपात में पॉलिथीन की थैलियों में भी बीज बोए जा सकते हैं क्योंकि इससे रूटस्टॉक्स और ग्राफ्टेड पौधों को आसानी से संभाला जा सकता है। युवा पौधों को सर्दियों के दौरान शुष्क पारिस्थिति की तंत्र के तहत पाले से और वर्षा आधारित अर्ध-शुष्क स्थिति में तीव्र विकिरण से बचाया जाना चाहिए।

वनस्पति प्रचार

मदर प्लांट का चयन: बेल के मदर प्लांट का चयन करने के लिए निम्नलिखित मूलभूत विशेषताओं पर विचार किया जाना चाहिए।

- पौधे लगातार अधिक उपज देने वाले होने चाहिए।
- सभी वांछित लक्षणों के साथ फलों की गुणवत्ता बहुत अच्छी होनी चाहिए।
- पौधा रोगों और कीटों से मुक्त होना चाहिए।
- यह पूर्ण असर अवस्था में होना चाहिए।

पैच बडिंग

इस विधि में पत्ती की धुरी से एक स्वस्थ कली का चयन किया जाता है। पत्ती के ब्लेड को एक तेज चाकू की मदद से हटा दिया जाता है, जिससे ठूंठ लबर करार रहता है। ऊपरी कट कली से लगभग 1-1.5 सेंटी मीटर ऊपर दिया जाता है, जो कली के नीचे बिना लकड़ी के भाग के 1.0-1.5 सेंटी मीटर नीचे जाता है और फिर निचला कट कली से लगभग 1.0 सेमी नीचे दिया जाता है। रूटस्टॉक पर इसी तरह का आयताकार चीरा रूटस्टॉक पर कली को लगाकर उन पर बड के सटीक आकार को चिह्नित करने के लिए बनाया जाता है और रूटस्टॉक की छाल को हटाने के बाद बड को जंक्शन पर

रखा जाता है। खुले स्थान को हटाने के लिए कली को हाथ से दबाया जाता है और कली के स्थान को छोड़ कर सफेद पॉलिथीन पट्टी (200 गेज मोटाई और 2 सेमी चौड़ी) से कस कर बांध दिया जाता है। मामले में, रूटस्टॉक पर कटौती व्यापक है, कम से कम एक तरफ कलम और स्टॉक की छाल का ठीक से मिलान किया जाना चाहिए। कली को अंकुरित होने की सुविधा के लिए रूटस्टॉक को कली से लगभग 10 सेमी ऊपर काटा जाता है। मिलाने के बाद, रूटस्टॉक के शीर्ष को बडयू नियन से थोड़ा ऊपर काटा जाता है और पॉलिथीन स्ट्रिप्स को सावधानी से हटा दिया जाता है। मुकुलन का समय विभिन्न किस्मों में पौधे के जीवित रहने को प्रभावित करता है।

ग्राफ्टिंग

बेल के लिए ग्राफ्टिंग सबसे लोकप्रिय अलैंगिक प्रचार तकनीक है। इसमें एक स्कोन (वांछित पौधे की किस्म का एक हिस्सा) को रूटस्टॉक (एक अलग किस्म का पौधा) से जोड़ना शामिल है। बेल के लिए सबसे अधिक इस्तेमाल की जाने वाली ग्राफ्टिंग तकनीकें फांक ग्राफ्टिंग, व्हिप ग्राफ्टिंग और साइड ग्राफ्टिंग हैं।

एयर-लेयरिंग

एयर-लेयरिंग एक अन्य अलैंगिक प्रचार तकनीक है जिसका उपयोग बेल के लिए किया जाता है। इसमें एक शाखा या तने के चारों ओर चीरा लगाना और घाव पर रूटिंग हार्मोन लगाना शामिल है। घाव को फिर एक नम माध्यम में लपेटा जाता है, जैसे स्पैगनममॉसयापीट और पेर्लाइट का मिश्रण। घाव से जड़ें विकसित होंगी, और जड़वाली शाखा को हटा कर एक नये पेड़ के रूप में लगाया जा सकता है।

टिश्यू कल्चर

टिश्यू कल्चर रोग मुक्त और आनुवंशिक रूप से समान बेल के पौधों के बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए उपयोग की जाने वाली तकनीक है। इसमें नियंत्रित स्थितियों के तहत बाँझ शकतत्वों से भरपूर माध्यम में पौधों की कोशिकाओं या ऊतकों का विकास शामिल है। टिश्यू कल्चर से पेक्षाकृत कम समय में बड़ी संख्या में पौधों का उत्पादन किया जा सकता है।

रोपण

हानिकारक मिट्टी के जीवों को मारने के लिए 1 मी x 1 मी x 1 मी के गड्ढों को सौर करण के लिए खोदा और उजागर किया जाता है, भविष्य के रूटिंग क्षेत्र में बेहतर वातन प्रदान करता है और पौधों के स्वस्थ विकास के लिए पोषण की आवश्यकता के लिए प्रावधान करता है। गड्ढों को ऊपर की मिट्टी में 20-25 किग्रा FYM मिलाकर भर दिया जाता है। काली कपास की मिट्टी में, उचितवातन प्रदान करने के लिए रेत को FYM और शीर्ष मिट्टी के साथ मिलाया जाना चाहिए। वर्षा आधारित परिस्थितियों में रोपण का आदर्श समय मानसून की पहली बारिश के ठीक बाद जून है। बेल का रोपण किस्म और कृषि-जलवायु परिस्थितियों के आधार पर 5 मीटर से 8 मीटर की दूरी पर किया जाता है। गर्म अर्ध-शुष्क पारिस्थिति की तंत्र की वर्षा आधारित स्थिति के तहत, उत्पादकता को अधिकतम करने के लिए बौनी किस्मों के वानस्पतिक रूप से प्रचारित पौधों विशेष रूप से गोमायशी को 5 मीटर x 5 मीटर की दूरी पर लगाया जा सकता है।

चंदवा प्रबंधन

फसल का चंदवा प्रबंधन उत्पादकता और गुणवत्ता को अधिकतम करने के लिए आकार और आकार के संबंध में उनकी संरचना के विकास और रख रखाव से संबंधित है। वृक्षों की ताक़त, प्रकाश, तापमान और आर्द्रता गुणवत्ता पूर्ण फलों के उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। चंदवा प्रबंधन की जड़ वास्तव में निहित है, कि कैसे हम उत्पादकता बढ़ाने और मौसम के प्रतिकूल प्रभाव को कम करने के लिए पेड़ की ताक़त और उपलब्ध धूप और तापमान का अधिकतम उपयोग करते हैं। बेल में छटाई पेड़ के आकार और आकार को सुधारने और विनियमित करने के लिए की जाती है ताकि चंदवा की वांछित वास्तुकला को प्राप्त किया जा सके और पेड़ की शाखाओं को हटाकर पर्णघनत्व को कम किया जा सके। बेल एक फूल गोभी और रामीफ्लोरस फल का पेड़ है और छंटाई के बाद नई उभरी हुई टहनियों पर फूल देखे जा सकते हैं।

रोग: बेल के पेड़ पर कोई गंभीर रोग नहीं लगता है। पौधे की वृद्धि और विकास को प्रभावित करने वाले कुछ रोगों की चर्चा नीचे की गई है:

पत्ती के धब्बे

अल्टर नेरिया लीफ स्पॉट (*अल्टरनेरिया अल्टरनेटा (Fr.) कीस्लर*) शुरू में भूरे या गहरे भूरे रंग के अनिश्चित आकार के धब्बे पत्तियों पर हल्के भूरे या गहरे भूरे रंग के छल्लों के साथ दिखाई देते हैं। प्रभावित पत्तियाँ झुलस कर गिर जाती हैं। अल्टरनेरिया अल्टरनेटा (Fr.) कीस्लर द्वारा रोग को उकसाया जाता है। 15 दिनों के अंतराल पर 0.2 प्रतिशत कॉपर

ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करने से इस रोग को नियंत्रित करने में मदद मिलती है।

ब्लैक लीफ स्पॉट (*आइसारो प्सिसएसपी*) : यह रोग इसारो प्सिसएसपी कवक के कारण होता है, जो पत्तियों की दोनों सतहों पर 2-3 मिमी ब्लैक स्पॉट के रूप में विकसित होता है। रोग के प्रबंधन के लिए डाइफोलिटन (0.2%) के छिड़काव की सिफारिश की जाती है।

बैक्टीरियल शॉटहोल और फ्रूट कैंकर

यह ज़ैंथोमोनस बिल्वा के कारण होता है और इसकी पहचान अति संवेदनशील पत्ती की सतह पर मिनट, गोलाकार, भूरे, पानी से भरे धब्बे होते हैं, जो शुरू में आकार में 1 मिमी से कम मापते हैं लेकिन बाद में आकार में 3-5 मिमी तक बढ़ जाते हैं और भूरे रंग का हो जाता है और कुछ उभरे हुए तैलीय किनारे के साथ अवतल हो जाता है। अधिक प्रभावित टहनियों को हटाने के बाद बोर्डोमिश्रण के छिड़काव से इसे प्रबंधित करने का सुझाव दिया गया है। स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट 250 पीपीएम याबोर्डो मिश्रण 1% का 12-15 दिनों के अंतराल पर एक या दोबार छिड़काव करने से रोग पर प्रभावी नियंत्रण होता है।

कीट

आमतौर पर, बेल गंभीर कीट की समस्या से मुक्त होता है, लेकिन कुछ कीट फसल को नुकसान पहुँचाने के लिए जाने जाते हैं, खासकर तब जब पर्यावरण की स्थिति कीटों के हमले के लिए बहुत अनुकूल होती है।

लेमन तितलियाँ (पैपिलियो डेमोलियस लिनिअस) पूरे वर्ष बगीचों और बगीचों में पाई जाती हैं, जो विभिन्न फूलों पर आती हैं लेकिन कोई नुकसान नहीं पहुँचाती हैं। हालांकि, इल्लियाँ पत्तियों को खाती हैं और आर्थिक नुकसान पहुँचाती हैं।

कटाई

बेल के फलों की तुड़ाई तब की जानी चाहिए जब वे पूरी तरह से पके हों लेकिन फिर भी दृढ़ हों। फलों को हाथ से या कटाई के उपकरण की मदद से तोड़ा जा सकता है। चोट लगने से बचने के लिए फलों को सावधानी से संभाला जाना चाहिए।

छँटाई

तुड़ाई के बाद, बेल के फलों को किसी भी क्षतिग्रस्त या रोग ग्रस्त फलों को हटाने के लिए छाँटना चाहिए। यह बीमारी के प्रसार को रोकने और खराब होने के जोखिम को कम करने में मदद करेगा।

भण्डारण

बेल के फलों को अच्छे वायु संचार वाले ठंडे और सूखे स्थान पर संग्रहित किया जाना चाहिए। भंडारण के लिए आदर्श तापमान 10-15 डिग्री सेल्सियस के बीच है। यदि तापमान बहुत कम है, तो तुषार के कारण फल खराब हो सकते हैं। यदि तापमान बहुत अधिक है तो फल जल्दी खराब हो सकते हैं।

पैकेजिंग

बेल के फलों को परिवहन के दौरान नुकसान से बचाने के लिए साफ और सूखी सामग्री के साथ टोकरे या टोकरियों में पैक किया जा सकता है। फलों को कुचलने या कुचलने से बचने के लिए पैकेजिंग को सावधानी से किया जाना चाहिए।

पकाना

बेल के फलों को कुछ दिनों के लिए कमरे के तापमान पर स्टोर कर के पकाया जा सकता है। यह सुनिश्चित करने के लिए फलों की नियमितरूप से जाँच की जानी चाहिए कि वे ज्यादा पके या खराब न हो जाये।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

पौधों हेतु प्रमुख पोषक तत्व तथा उनके उर्वरक

खलील खाँन[1]* एवं प्राची राठौर[2]

[1]मृदा विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान केंद्र दलीप नगर, कानपुर देहात

[2]मृदा विज्ञान कृषि रसायन, मेजर एस. डी. सिंह पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, फर्रुखाबाद

पत्राचारकर्ता: khankhalil64@gmail.com

परिचय

पौधों के पोषक तत्व उन तत्वों को कहते हैं, जिनकी कमी से पौधे अपना जीवन चक्र पूरा न कर सकें तथा पौधों के स्वास्थ्य में जिनका सीधा योगदान हो। इन तत्वों की कमी को केवल इन्हीं तत्वों के प्रयोग से ही पूरा किया जा सकता है। पौधों के 17 पोषक तत्व हैं। इनमे 9 स्थूल पोषक तत्व कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम, गंधक, कैल्शियम तथा मैग्नीशियम है तथा 8 सूक्ष्म पोषक तत्व लोहा, जस्ता, तांबा, बोरोन, मोलिब्डेनम, मैंगनीज, क्लोरीन व निकिल है।

मृदा में पोषक तत्वों की कमी व उनके उपयोग की दृष्टि से नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटैशियम अधिक महत्वपूर्ण है।

क. नाइट्रोजन तत्व

नाइट्रोजन तत्व फसलों मे हरापन बनाता है तथा वानस्पतिक वृद्धि को बढ़ावा देता है। साथ ही यह फसलों में प्रोटीन व कार्बोहाइड्रेट के उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान भी देता है। नाइट्रोजन में प्रमुख उर्वरक निम्नलिखित हैं-

उर्वरक	नाइट्रोजन (प्रतिशत)
यूरिया	46
कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट	25 तथा 26
अमोनियम सल्फेट	20
अमोनियम सल्फेट नाइट्रेट	26
कैल्शियम नाइट्रेट	15.5
सोडियम नाइट्रेट	16
अमोनिया घोल	20-25
अमोनिया एनहाइड्रस	82
अमोनियम फास्फेट	20

मृदा व फसलों के प्रति अनुकूलता

नाइट्रोजन उर्वरकों की कार्यकुशलता बढ़ाने के लिये मिट्टी की किस्म तथा विभिन्न फसलों के स्वभाव के अनुसार ही उर्वरकों का चुनाव किया जाना चाहिये। रेतीली जमीन में सिंचाई तथा वर्षा से पहले नाइट्रेट तथा एमाईड उर्वरकों के प्रयोग की अपेक्षा अमोनियम उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिये। शुष्क मिट्टी में नाइट्रेट उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिये। धान वाली जमीन व अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में अमोनियम व एमाइड उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिये।

अम्लीय मृदाओं में अमोनियम व एमाइड उर्वरकों की अपेक्षा नाइट्रेट उर्वरक जैसे सोडियम नाइट्रेट व कैल्शियम नाइट्रेट का प्रयोग करना चाहिये। क्षारीय (नमकीन) व गंधक की कमी वाली मृदाओं में अमोनियम सल्फेट उर्वरक अच्छा रहता है। अगर खड़ी फसल में नाइट्रेट का छिड़काव करना हो तो एमाइड उर्वरकों का प्रयोग सबसे अच्छा रहता है।

धान, गन्ना तथा आलू के लिये अमोनियम उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिये जबकि तम्बाकू, आलू व अंगूर में अमोनियम क्लोराइड का प्रयोग न करें। तिलहन व दलहनों में अमोनियम सल्फेट अन्य उर्वरकों की अपेक्षा अच्छा रहता है, जो नाइट्रोजन के साथ-साथ गंधक की पूर्ति भी करता है।

नाइट्रोजन उर्वरकों के डालने का सही समय व विधि

नाइट्रोजन उर्वरकों के सही उपयोग का समय पौधे की तेज वृद्धिकाल अवस्था होती है। प्रायः बुआई के समय तथा वृद्धि के पहले 25-50 दिनों में प्रयोग करने से अधिक लाभ मिलता है। बुआई के समय अन्य तत्वों के उर्वरकों के साथ मिलकर बीज से नीचे या बगल में 2 से.मी. की दूरी पर बोये।

ISSN No. 2583-3316

रेतीली जमीनों में सिंचाई के बाद तथा भारी जमीनों में सिंचाई से पहले प्रयोग करें। रेतीली जमीनों में गुड़ाई करके उर्वरकों को मिट्टी में मिला देना चाहिये। सर्दियों में ओस उतरने के बाद तथा गर्मियों में व बरसात में दोपहर बाद उर्वरकों को छिड़कना चाहिये।

ख. फॉस्फोरस तत्व

फॉस्फोरस पौधों में श्वसन क्रिया, प्रकाश संश्लेषण तथा अन्य जैव रासायनिक क्रियाओं के लिये आवश्यक है। जड़ों के विकास, कोशिकाओं के निर्माण, पौधों के फलने व फूलने, बीज के निर्माण तथा गुणों में वृद्धि करता है। फॉस्फोरस कें मुख्य उर्वरक निम्नलिखित हैं-

उर्वरक	फॉस्फोरस (प्रतिशत)	नाइट्रोजन (प्रतिशत)
सिंगल सुपर फास्फेट (एस.एस.पी.)	16	-
ट्रिपल सुपर फास्फेट	46	-
डाईअमोनियम फास्फेट (डी.ए.पी.)	46	18
मोनो अमोनियम फास्फेट	20	16
मोनो अमोनिया फास्फेट	20	20
यूरिया अमोनियम फास्फेट	28	28
नाइट्रो फास्फेट (सुफला)	32	-

मृदा व फसलों के प्रति अनुकूलता

क्षारीय (पी.एच. > 8.2) वाली भूमि में केवल 80 प्रतिशत से ज्यादा पानी में घुलनशील फॉस्फोरस के उर्वरक ही डालने चाहिये। अम्लीय भूमि में पानी के अघुलनशील फॉस्फोरस के उर्वरकों को बिखेरकर प्रयोग करना लाभकारी रहता है। इन मृदाओं में साइट्रिक एसिड में घुलनशील फॉस्फोरस के उर्वरक प्रयोग करने चाहिये।

अत्यधिक अम्लीय मृदाओं में तेजाब घुलनशील फॉस्फोरस स्रोत जैसे- रॉक फॉस्फोरस स्रोत बोन मील आदि का प्रयोग करें। चूने वाली भूमि में दानेदार व जल में 80 प्रतिशत घुलनशील फॉस्फोरस के उर्वरक श्रेष्ठ रहते हैं क्योंकि चूने वाले उर्वरकों का स्थिरीकरण शीघ्र और अधिक हो जाता है।

पाउडर वाले उर्वरकों को अम्लीय भूमि में बिखेरकर मिलाने से अधिक लाभ हो जाता है। कार्बनिक खादों को फॉस्फोरस के उर्वरकों के साथ प्रयोग करने से उर्वरकों की क्षमता में वृद्धि होती है।

कम अवधि वाली फसलें जिनमें जल्दी शुरूआत करने की जरूरत होती है जैसे गेहूँ, धान, मक्का, सोयाबीन व सब्जियों में पानी में घुलनशील फॉस्फोरस के उर्वरक डालने चाहिये। लम्बी अवधि की फसलों में साइट्रिक एसिड में घुलनशील फॉस्फोरस के उर्वरक डालने चाहिये।

तिलहन में सिंगल सुपर फास्फेट अच्छा रहता है क्योंकि यह गंधक भी पौधों को देता है। गेहूँ में डी.ए.पी. खाद का प्रयोग अच्छा रहता है।

उर्वरक डालने का सही समय व विधि

फॉस्फोरस उर्वरक रोपाई के समय बीज से 2-3 से.मी. गहरा बोना चाहिये। यदि बुआई नहीं कर सकते हैं तो एक-सार बिखेर कर मिट्टी में मिला दें।

ग. पोटैशियम तत्व

पोटैशियम पत्तियों में शर्करा और स्टार्च के निर्माण की कुशलता में वृद्धि करता है। यह कार्बोहाइड्रेट, पोषक तत्व व पानी के स्थानान्तरण में सहायता करता है तथा पौधों में रोगों के प्रति प्रतिरोधिता बढ़ाता है। पोटैशियम में मुख्य उर्वरक निम्नलिखित हैः-

उर्वरक	पोटाश (प्रतिशत)
म्यूरेट आफ पोटाश	60
पोटैशियम सल्फेट	50

मृदा व फसलों के प्रति अनुकूलता

म्यूरेट ऑफ पोटाश सस्ता तथा आसानी से उपलब्ध होने वाला उर्वरक है। क्षारीय मृदाओं में म्यूरेट ऑफ पोटाश न डालें। इनमें पोटैशियम सल्फेट का प्रयोग करना चाहिये। शर्करा तथा स्टार्च वाली फसलों जैसे- गन्ना, आलू, केला आदि के लिये अधिक मात्रा में पोटैशियम की आवश्यकता होती है।

अधिक उपज देने वाली धान तथा गेहूँ की फसल को भी पोटैशियम की अधिक आवश्यकता पड़ती है। म्यूरेट ऑफ पोटाश, तम्बाकू, आलू, टमाटर तथा अंगूर आदि फसलों के लिये हानिकारक हो सकता है। इसलिये इन फसलों में पोटैशियम सल्फेट का प्रयोग करना चाहिये। परंतु धान जैसी पानी में खड़ी रहने वाली फसलों में पोटैशियम सल्फेट के बजाय म्यूरेट ऑफ पोटाश अच्छा रहता है।

ISSN No. 2583-3316

उर्वरक डालने का समय व विधि

पोटैशियम के उर्वरकों को फसलों में रोपाई के समय बीज डालना चाहिये। म्यूरेट आफॅ पोटाश को यूरिया की तरह खड़ी फसल में छिड़क कर भी दिया जा सकता है। लेकिन उचित रहेगा कि इसका प्रयोग रोपाई के समय ही किया जाये। हल्की जमीनों में अगर पोटैशियम की अधिक मात्रा डालनी है तो इसको आधा-आधा करके दो बार में डालना चाहिये।

कार्बन

पृथ्वी पर पाए जाने वाले तत्वों में कार्बन एक प्रमुख एवं महत्त्वपूर्ण तत्व है। ये पानी हवा इत्यादि से पौधों को उपलब्ध होते रहते हैं। इसे किसी उर्वरक द्वारा फसलों को देने की आवश्यकता नहीं है।

हाइड्रोजन

हाइड्रोजन की खोज 1766 में हेनरी केवेण्डिस ने की थी। इन्होने इसे लोहा पर तनु सल्फ्यूरिक अम्ल की अभिक्रिया से प्राप्त किया था तथा ज्वलनशील वायु नाम था। 1883 में लैवाशिए ने इसका नाम हाइड्रोजन रखा क्योकि यह ऑक्सीजन के साथ जलकर जल बनाती है। ये तत्व भी पानी, हवा इत्यादि से पौधों को उपलब्ध होते रहते हैं। इसे भी किसी उर्वरक द्वारा फसलों को देने की आवश्यकता नहीं है

ऑक्सीजन

ऑक्सीजन या प्राणवायु या रंगहीन, स्वादहीन तथा गंधहीन गैस है। इसकी खोज, प्राप्ति अथवा प्रारम्भिक अध्ययन में जे. प्रीस्टले और सी.डब्ल्यू. शेले ने महत्वपूर्ण कार्य किया है। यह एक रासायनिक तत्व है। पौधे इसे भी वायु मण्डल से ही ग्रहण करते है। ये पोषक तत्व भी किसी उर्वरक द्वारा फसलों को नहीं दिया जाता है।

सल्फर

सल्फर के उपयोग के लिए हम फसल की शुरुआत मे उर्वरकों का उपयोग बेसल खुराक में खड़ी फसल में ड्रिप द्वारा कर सकते हैं। अन्य उर्वरकों में जैसे बेनसेल्फ़ 90% कोसावेट फर्टिस 90% सल्फामक्स ग्रोमोर 90% सल्फर 90% इस तरह उर्वरकों का उपयोग कर सकते है। साथ ही सिंगल सुपर फास्फेट, सल्फेट आफ पोटाश 20:20:13 ऐसे उर्वरकों से सल्फर फसल को मिलता है। तथा जिप्सम का भी प्रयोग कर सकते हैं।

कैल्शियम

कैल्शियम की पूर्ति हेतु जिप्सम का प्रयोग करते हैं। क्योंकि जिप्सम भी कैल्शियम सल्फेट के रूप में जाना जाता हैं। जिप्सम एक ऐसा खनिज हैं। जो प्राकृतिक रूप से जाना जाता हैं। इसमे कैल्शियम और सल्फर भरपूर मात्रा में पाया जाता हैं।

मैग्नीशियम

मैग्नीशियम की पूर्ति के लिए शैवाल युक्त चूना पत्थर (लाइमस्टोन) डोलोमाइट या लाइमस्टोन मैग्नीशियम। मिट्टी में पोषक तत्व को संतुलित करने के लिए मवेशी खाद जैविक पतवार या कम्पोस्ट का प्रयोग करें तथा मैग्नीशियम सल्फेट उर्वरक का प्रयोग करें।

लोहा

पौधों की पत्तियों में हरे रंग के उत्पादन में लौह तत्व का महत्वपूर्ण योगदान है। लौह तत्व की कमी होने पर सर्वप्रथम सबसे ऊपर की पत्तियों का रंग पीला, सफेद होने लगता है। और बाद मे पूरी पत्ती सफेद रंग में बदल जाती है। तथा सूखने लगती है। लोहा पोषक तत्व की आपूर्ति हेतु 50 किलो ग्राम फेरस सल्फेट प्रति हेक्टेयर डालना चाहिए। तथा खड़ी फसल में 1-2% फेरस सल्फेट का घोल बना कर छिड़काव करना चाहिए।

मोलिब्डेनम

मोलिब्डेनम जल में घुलनशील लवण है। ये मिट्टी और पर्णीय छिड़काव हेतु उपयुक्त होते हैं। इस तत्व की पूर्ति हेतु सोडियम मोलिब्डेट तथा अमोनियम मोलिब्डेट जैसे उर्वरको का प्रयोग किया जाता है। सोडियम मोलिब्डेट में मोलिब्डेनम 40% होता है। जबकि अमोनियम मोलिब्डेट में मोलिब्डेनम 54% होता है। मृदा में मिलाने हेतु 0.5 किलो ग्राम सोडियम मोलिब्डेट प्रति हेक्टेयर प्रयोग किया जाता है। जबकि 250 ग्राम को 150 लीटर पानी मे घोल कर पर्णीय छिड़काव करें या 0.6% का छिड़काव करें।

क्लोरीन

क्लोरीन पोषक तत्व पर्ण हरित के निर्माण मे सहायक है तथा पौधों मे रसाकर्षण दाब को बढ़ाता है साथ ही पौधों की पत्तियों में पानी रोकने की क्षमता को भी बढ़ाता है। इस तत्व की कमी से पत्तियों मे विल्ट तथा हरितहीन हो जाती हैं। इस तत्व की पूर्ति कार्बनिक खादों, पानी आदि से पूर्ति हो जाती है।

ISSN No. 2583-3316

जस्ता

यह पौधों के अन्दर इंडोल ऐसिटिक ऐसिड नामक हार्मोन निर्माण करने एवं उनकी वृद्धि में सहायता करता है और प्रोटीन की मात्रा को भी बढ़ाता है। जस्ते की पूर्ति के लिए 25 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर की दर प्रयोग करना चाहिए। खड़ी फसल में छिड़काव हेतु 5 किलो ग्राम जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

बोरॉन

यह पौधों का आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्व है और पौधों के भीतर शर्करा के स्थानांतरण को बढ़ाता है। बोरान परागण व कोशिका विभाजन में मदद करता है। यह पौधों में फूल, फल तथा बीज बनने की क्रिया को समाजित करता है। अधिकतर फसलों में 15-16 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बोरेक्स की आवश्यकता होती है।

निकिल

पौधों की जड़ों की वृद्धि व विकास बहुत कम होता है। कभी-कभी जड़ें सूख भी जाती है। अधिक कमी से तने का गहरा पीला पड़ना फल बीज का निर्माण सही न होना। इसकी कमी से आलू की पत्तियाँ प्याले के आकार की तथा दलहनी फसलों की पत्तियाँ नीले रंग की और चौड़ी पत्ती वाले पौधों में पत्तियों का आकार छोटा रह जाता है। इसका मृदा मे क्रिटिकल स्तर 1.1 पीपीएम होता है। इसकी पूर्ति हेतु निकिल सल्फेट उर्वरक का प्रयोग किया जाता है।

उर्वरक

विकास और उत्पादकता को बढ़ावा देने के लिए मिट्टी या पौधों में उर्वरक नामक एक प्राकृतिक या कृत्रिम सामग्री डाली जाती है। ये पौधों को पोषक तत्व देते हैं। उदाहरणः यूरिया, निर्जल अमोनिया आदि।

उर्वरक क्या होते हैं

उर्वरक फसलों को उनकी उत्पादकता बढ़ाने के लिए आपूर्ति किए जाने वाले अतिरिक्त पदार्थ हैं। इनका उपयोग किसान प्रतिदिन फसल की पैदावार बढ़ाने के लिए करते हैं। इन उर्वरकों में पौधों द्वारा आवश्यक पोषक तत्व होते हैं, जिनमें नाइट्रोजन, पोटैशियम और फॉस्फोरस शामिल हैं। वे मिट्टी की जल धारण क्षमता को भी बढ़ाते हैं और इसकी उर्वरता को बढ़ाते हैं।

उर्वरकों के प्रकार

उर्वरकों को मुख्य रूप से दो जैविक और अकार्बनिक उर्वरकों में वर्गीकृत किया जाता है।

जैविक खाद

पौधों और जानवरों से प्राप्त प्राकृतिक उर्वरकों को जैविक खादों के रूप में जाना जाता है। पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक कार्बनिक अणुओं को जोड़कर, यह मिट्टी को समृद्ध करता है। जैविक उर्वरक मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा को बढ़ाते हैं, माइक्रोबियल प्रजनन को प्रोत्साहित करते हैं और मिट्टी की भौतिक और रासायनिक संरचना को बदलते हैं। इसे हरे रंग के खाद्य पदार्थों के लिए आवश्यक तत्वों में से एक माना जाता है।

जैविक खाद निम्नलिखित उत्पादों से प्राप्त की जा सकती है-

- फसल अवशेष
- पशुधन खाद
- औद्योगिक कूड़ा
- कूड़ा-करकट

अकार्बनिक उर्वरक

रासायनिक तकनीकों द्वारा उत्पन्न रासायनिक उर्वरक, जिनमें फसल के विकास के लिए पोषक तत्व होते हैं, अकार्बनिक उर्वरक के रूप में जाने जाते हैं। अकार्बनिक उर्वरक निम्न प्रकार के होते हैं।

नाइट्रोजन उर्वरक

नाइट्रोजन उर्वरकों में फसलों के विकास के लिए आवश्यक नाइट्रोजन होता है। क्लोरोफिल का एक प्रमुख घटक नाइट्रोजन, प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में मुख्य संतुलन में मदद करता है। यह पौधों में अमीनो एसिड का भी हिस्सा है और इसमें प्रोटीन होता है। नाइट्रोजन उर्वरक कृषि उत्पादों के उत्पादन और गुणवत्ता में सुधार करते हैं।

फॉस्फोरस उर्वरक

फॉस्फोरस उर्वरक में, फॉस्फोरस प्रमुख पोषक तत्व है। प्रभावी फास्फोरस एकाग्रता, निषेचन तकनीक, मिट्टी की विशेषतायें, और फसल के उपभेद सभी प्रभावित करते हैं कि उर्वरक कितना सफल है। कोशिका के प्रोटोप्लाज्म में फॉस्फोरस होता है, जो कोशिका वृद्धि और प्रसार के लिए महत्वपूर्ण है। पौधों की जड़ों की वृद्धि फास्फोरस उर्वरक द्वारा सहायता प्राप्त होती है।

ISSN No. 2583-3316

उर्वरकों के लाभ

उर्वरकों के लाभों का उल्लेख निम्नलिखित है।

- एक विशिष्ट पोषक तत्व की आपूर्ति के लिए हम इसकी पोषक तत्व विशिष्ट प्रकृति के कारण एक विशिष्ट उर्वरक का चयन कर सकते हैं।
- पानी में घुलनशील और मिट्टी में आसानी से घुल सकता है। इसलिए, वे पौधों द्वारा आसानी से अवशोषित हो जाते हैं।
- इनका फसलों पर तेजी से असर होता है।
- फसल की पैदावार बढ़ाएँ और बड़ी आबादी को खिलाने के लिए पर्याप्त भोजन उपलब्ध करायें।
- अनुमानित और भरोसेमंद

उर्वरकों के नुकसान

उर्वरकों के निम्नलिखित नुकसान हैं।

- महँगा
- उर्वरकों में अवयव त्वचा और श्वसन प्रणाली के लिए जहरीले होते हैं।
- उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से पौधों को नुकसान होता है और मिट्टी की उर्वरता कम हो जाती है।
- लीचिंग होती है और उर्वरक नदियों तक पहुँचते हैं जिससे यूट्रोफिकेशन होता है।
- दीर्घकालिक उपयोग माइक्रोबियल गतिविधि को कम करता है और मिट्टी के पीएच को असंतुलित करता है।

उर्वरकों का उपयोग

उर्वरकों का उपयोग विभिन्न उद्देश्यों के लिए किया जाता है।

- पौधों को अतिरिक्त पोषक तत्व प्रदान करने के लिए उपयोग किया जाता है।
- उन्हें फसलों की उपज में सुधार करने के लिए जोड़ा जाता है।
- लॉन की हरियाली के लिए नाइट्रोजन युक्त उर्वरकों का उपयोग किया जाता है।
- जैविक खाद मिट्टी की बनावट और उर्वरता में सुधार करती है।
- बागवान पौधों की कुछ जरूरतें जैसे पोषण संबंधी जरूरतों को पूरा करने के लिए उर्वरकों का उपयोग करते हैं।
- खोए हुए पोषक तत्वों को बदलने के लिए गमलों में लगे पौधों में उर्वरक मिलाए जाते हैं।

उर्वरकों का महत्व

इतने सीमित संसाधनों के साथ बढ़ती हुई जनसंख्या की माँगों को पूरा करना काफी चुनौतीपूर्ण है। कीटों, उर्वरकों की कमी और मिट्टी की उर्वरता में गिरावट आई है। परिणामस्वरूप कृषि में उर्वरकों के महत्व का विस्तार हुआ है।

पौधों के लिए उर्वरक निम्न प्रकार से आवश्यक हो सकते हैं:

- उर्वरक पौधों को कीटों के प्रति अधिक प्रतिरोधी बनाते हैं। नतीजतन, वे कम कीटनाशकों और शाकनाशियों का उपयोग कर रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप स्वस्थ फसलें होती हैं। इसलिए, कम बीमारियाँ मौजूद होती हैं, जिससे फसलों को एक अच्छा मूल्य मिलता है।
- उर्वरक पौधों की जल धारण क्षमता में सुधार करते हैं और जड़ की गहराई बढ़ाते हैं।
- उर्वरकों में मौजूद पोटैशियम की मात्रा पौधों के तिनकों और डंठलों को मजबूती प्रदान करती है।
- उर्वरकों में मौजूद फॉस्फोरस जड़ों के तेजी से विकास और पौधों में बीजों के निर्माण में मदद करता है।
- उर्वरकों में नाइट्रोजन पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देता है, जो पौधों के हरे रंग में देखा जाता है

चूँकि रासायनिक उर्वरक मिट्टी की उर्वरता पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं, इसलिए जैव उर्वरकों का उपयोग किया जाने लगा। ये ऐसे पदार्थ हैं जिनमें जीवित कोशिकायें और यहाँ तक कि सूक्ष्म जीव भी होते हैं। वे पौधों की वृद्धि के लिए मिट्टी को आवश्यक पोषक तत्व और जीवाणु प्रदान करते हैं। वे मिट्टी को उसकी उर्वरता बनाए रखने में मदद करते हैं। वे पर्यावरण के अनुकूल हैं और पौधों में रोग पैदा करने के लिए जिम्मेदार रोगजनक घटकों को भी नष्ट कर देते हैं। एसिटोबैक्टर और राइजोबियम ऐसे दो व्यापक रूप से उपयोग किए जाने वाले जैव उर्वरक हैं।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

खरीफ प्याज की उन्नत उत्पादन तकनीक

पी. ए. साबळे*, मनीष शर्मा, किशन वाघेला, जी. एस. पटेल एवं पियूष वर्मा

बागवानी विभाग, बागवानी महाविद्यालय, सरदार कृषीनगर दांतीवाडा कृषि विश्वविद्यालय, जगूदन, मेहसाणा

पत्राचारकर्ता: sable.pating@gmail.com

परिचय

प्याज व्यावसायिक दृष्टिकोण से एक महत्वपूर्ण बल्बनुमा मसाला फसल है, जिसकी खेती भारत के साथ-साथ अन्य देशों में भी सफलतापूर्वक की जाती है। इसका प्रयोग मुख्य रूप से भोजन को स्वादिष्ट बनाने, सलाद के रूप में व औषधी के लिए किया जाता है। भारत में प्याज का उत्पादन तीन मौसमों यानी खरीफ, पछेती- खरीफ और रबी में किया जाता है। खरीफ मौसम में प्याज फसल का लगभग 21.21% उत्पादन होता है। खरीफ प्याज को जुलाई - अगस्त के दौरान प्रत्यारोपित किया जाता है और संभवतः अक्टूबर- नवंबर के दौरान कटाई की जाती है। प्याज के अधिक उत्पादन के लिए विविध तकनीकी की आवश्यकता होती है, जो की एकीकृत फसल प्रबंधन को अपनाने से संभव है।

खरीफ प्याज की पौधशाला प्रबंधन

पौधशाला में प्याज की पौध तैयार करना एक महत्वपूर्ण विषय है। पौधशाला में पौध नुकसान बीज के कम जमाव के कारण, कभी कभी जमाव के बाद विभिन्न प्रकार के कीटों एवं रोगों का प्रकोप, पोषण तत्वों की कमी के कारण भी हो जाता है। अंतः आवश्यक है कि प्याज की पौधशाला में किसी प्रकार का कोई नुकसान न हो। इसके लिए पौधशाला प्रबंधन जरुरी है। पौधशाला एक ही स्थान पर बार-बार तैयार न करें क्योंकि ऐसा करने से कीटों एवं रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है। पौधशाला के लिए उत्तम जल निकास एवं उच्च कार्बनिक पदार्थयुक्त, पर्याप्त भूमि ढलान के साथ भुरभुरी बलूई दोमट-दोमट मृदा, जिसका पी.एच मान 6-7.5 हो, सर्वोत्तम मानी जाती है। पौधशाला के लिए भूमि को जुताई कर रोटावेटर चलाकर मिट्टी को भुरभुरी बनाकर समतल कर लेते हैं। सामान्य रूप से खरीफ मौसम में प्याज की पौधशाला में बीज जमाव के बाद आद्र गलन रोग (डैम्पिंग ऑफ़) का प्रकोप होता है। इस रोग के प्रकोप से पौधे जड़ के पास से गलने लगते है और सूख जाते हे। इस रोग के प्रबंधन के लिए मृदा सौरिकरण उपचार की आवश्यकता होती है। मृदा में अनेक प्रकार के कीटों एवं हानिकारक फफूँदों का भी वास होता है। मृदा जनित रोगों तथा छिपे कीटों से पौध की सुरक्षा के लिए मृदा शोधन अत्यंत आवश्यक है। इस विधि में जिस स्थान पर पौधशाला तैयार करना हो, उस स्थान की रबी फसल की कटाई के पश्चात् मार्च में गहरी जुताई कर अप्रैल में हल्की सिंचाई करके थोड़ा गीला कर दे, ताकि मृदा में नमी बनी रहे एवं खरपतवारों के बीज अंकुरित हो जायें। अब क्षेत्र को मार्च - मई के दौरान 200 गेज पारदर्शी सफेद पॉलीथिन से ढंककर चारों तरफ के किनारे मृदा से दबा दें, ताकि पॉलीथिन के अंदर की हवा तथा वाष्प बाहर न निकले। आवश्यकतानुसार, लगभग 5-6 सप्ताह बाद पॉलीथिन की चादर हटाकर मृदा की अच्छी तरह गुड़ाई करके क्यारी बनाकर बीज की बुआई करते हैं।

सौरीकरण क्षेत्र को पर्याप्त दिनों तक खुला छोड़ दें, ताकि गैस क्यारी से बाहर निकल जाये। इस से मृदाजनित रोगकारक मर जाते है और खरपतवार नियंत्रण होता है व साथ ही साथ मृदा में उपस्थित मूलग्रंथि सूत्रकृमि की संख्या में भी कमी आती है। कैप्टॉन या थीरम कवकनाशी की 5 ग्राम मात्रा प्रति वर्ग मीटर की क्यारी में डालकर मृदा में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। इसके अलावा, ट्राइकोडर्मा विरिडी को 1.25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर गोबर की खाद में मिलाकर मृदा में मिला देने की भी सिफारिश की जाती है, इसके बाद हल्की सिंचाई कर दें।

उपचार के उपरांत क्यारियों में नमी बनाये रखें। जब भी ट्राइकोडर्मा या ऐसे ही किसी अन्य जैविक पदार्थ का अनुप्रयोग करें, तब अन्य किसी रसायन का प्रयोग न करें। प्याज की 1 हैक्टर क्षेत्रफल में प्रत्यारोपण करने के लिए लगभग 0.05 हैक्टर (5 गुंथा) पौधशाला क्षेत्र की आवश्यकता होती है। जुताई के बाद गोबर 0.5 टन, 2:1:1 कि.ग्रा. नाइट्रोजनः फॉस्फोरसः पोटाश प्रति 5 गुंथा मृदा में अच्छी प्रकार मिलाकर उठी हुई क्यारियों बनानी चाहिए। नाइट्रोजन की 1 कि.ग्रा. मात्रा बुआई के 20 दिनों बाद सिंचाई उपरांत देनी चाहिए। आदर्श

ISSN No. 2583-3316

क्यारियों का आकार 2-3 मीटर लंबा एवं 1-1.5 मीटर चौड़ा होना चाहिए। वर्षा कालीन पौधशाला के लिए सतह से 10-15 से.मी. ऊँचाई वाली पौधशाला क्यारी उचित रहती है। क्यारी की चौड़ाई 1-1.5 मीटर तक सीमित करनी चाहिए, ताकि संपूर्ण क्यारियों में अंतःकर्षण क्रियायें (सिंचाई, निराई-गुड़ाई) आदि आसानी से की जा सकें।

तस्वीर 1

तस्वीर 2

क्यारियों मे खाद एवं उर्वरक मृदा में मिलाने तस्वीर 1 और बीज बुआई तस्वीर 2 की विधि

पौधशाला में क्यारियाँ मौसम के अनुसार बनाई जाती है। वर्षा मौसम में उठी हुई क्यारियाँ तैयार की जानी चाहिए। क्योंकि भारी मिट्टी में जल जमाव की संभावना होती है। जहाँ ड्रिप सिंचाई सुविधा उपलब्ध हो, वहाँ उठी हुई क्यारियाँ तैयार की जा सकती हैं। उठी हुई क्यारियों को सिंचाई टपक या बौछार विधि द्वारा करनी चाहिए। हालांकि, बलुई मिट्टी में पौधशाला समतल क्यारियों में भी हो सकती है। एक हैक्टर क्षेत्र में प्रत्यारोपण के लिए पौधशाला बनाने के लिए लगभग 6-7 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। बुआई से पहले बीज को थीरम या कैप्टान 2-3 ग्रा./ कि.ग्रा. बीज की दर से उपचार करे। पहले से उपचारित किये हुए पैक बीजों को फिर से उपचार की आवश्यकता नहीं होती है। बीजों को कतार में बोना चाहिए। कतार से कतार में लगभग 5- 7.5 से.मी. अंतर होना चाहिए और बीजों को 1-1.5 से.मी. गहराई तक बोना चाहिए। बीज की बुआई पश्चात् बीजों को सेंद्रिय खाद के बारीक चूर्ण से ढक दें और हल्की सिंचाई करें। क्यारियों में इष्टतम तापमान और नमी बनाए रखने के लिए सूखे पुआल से ढकना चाहिये। छोटे क्षेत्र में पौधशाला हो तो अंकुरण पूरा होने तक आवश्यकतानुसार हजारे की सहायता से सिंचाई करें। बड़े क्षेत्र में सिंचाई टपक या बौछार विधि द्वारा करें।

तस्वीर 1

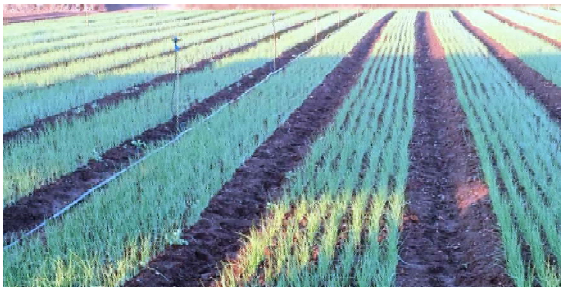

तस्वीर 2

पौधशाला में टपक तस्वीर 1 या बौछार तस्वीर 2 विधि द्वारा सिंचाई

बीज अंकुरित होने के लगभग 6-8 दिन बाद तुरंत ढकी हुई घास -पुआल को हटा दें। यदि इसको हटाने में देरी होगी तो पौध परिणाम स्वरूप लंबे और पीले रंग के हो सकते हैं। पौधशाला में 2-3 बार हाथ से निराई करना प्रभावी होती है। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए बीज अंकुरण से पहले पेन्डीमेंथालिन 2 एम.एल. प्रति लीटर पानी की दर से प्रयोग करें और बुआई के 20-25 दिन बाद निराई करें। पौधशाला को तेज गर्मी और बरसात के मौसम में ग्रीन शेडनेट (2 मीटर ऊँचाई पर) द्वारा संरक्षित किया जाना चाहिए। पौधशाला में रोपाई पर विभिन्न कीटों और बीमारियों का प्रकोप हो सकता है। फिप्रोनिल 5 ई.सी. 1 एम.एल. या कार्बोसल्फान 25% ई.सी. 2 एम.एल. या प्रोफेनोफॉस 1 एम.एल. प्रति लीटर पानी छिड़काव थ्रिप्स को नियंत्रित करने के लिए प्रभावी है। लीफ ब्लाइट (झुलसा) रोगों के प्रबंधन के लिए मैंकोजेब 2.5 ग्रा. या हेक्साकोनाझोल या प्रोपिकाझोल 1 ग्रा./ली. पानी छिड़काव कर सकते है। पौध पर फफूँद रोग और रस चुसने वाली कीट का प्रादुर्भाव एक साथ दिखाई देने पर मैंकोजेब 2.5 ग्रा.+फिप्रोनिल

ISSN No. 2583-3316

1 एम.एल. या हेक्साकोनाजोल 1 एम.एल.+ प्रोफेनोफॉस 1 एम.एल. या प्रोपिकोनाजोल 1 ग्रा.+ कार्बोसल्फान 2 एम.एल. मात्रा का प्रति लीटर पानी के अनुसार छिड़काव करे। कीटनाशी और फफूँदनाशी के साथ में चिपकने वाले पदार्थ मिलाकर छिड़काव करें।

पदगलन और फफूँद विल्ट (मुरझान) रोग के प्रबंधन के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत या मेटलैक्सिल / मेंकोजेब (संयुक्त) 0.2 प्रतिशत से मृदा में ड्रेंचिंग करें।

प्याज की पौधशाला में ड्रेंचिंग विधि

बुआई के 20 दिनों के बाद 19:19:19 (2.5-3 ग्रा./ ली. पानी) और सूक्ष्म पोषक तत्व मिश्रण-IV (झींक 6%, फेरस 4%, मैंगनीज़ 1%, कॉपर 0.5% और बोरॉन 0.5%) की 1-1.5 ग्रा./ लीटर पानी के छिड़काव से मुख्य और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमियों को नियंत्रित कर सकते हैं।

तस्वीर 1

तस्वीर 2

पोषक तत्वों की कमियों के कारण पीले पौधों (तस्वीर 1) में 19:19:19 और माइक्रोन्यूट्रिएंट मिश्रण-IV छिड़काव से सुधार (तस्वीर 2)

खरीफ मौसम की प्रमुख किस्में

बसवंत -780

फुले समर्थ

अग्रीफाऊंड डार्क रेड

भीमा सूपर

भीमा डार्क रेड

भीमा राज

भीमा श्वेता भीमा शुभ्रा

प्रत्यारोपण

लगभग 45-55 दिन की पौध प्रत्यारोपण के लिए उपयुक्त होती है। पौध प्रत्यारोपण के लिए 15 x 10 से.मी. दूरी रखनी चाहिए। प्रत्यारोपण के समय पौध का एक तिहाई शीर्ष भाग काट देना चाहिए।

पौधशाला से पौध निकालने के पश्चात् उनकी जड़ को उपचारित करने के लिए 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम और 2 एम.एल. कार्बोसल्फान को प्रति लीटर पानी की दर से घोल में डुबाकर इसके बाद खेत में प्रत्यारोपण करें।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

मिट्टी की जाँच के आधार पर उर्वरक का प्रयोग करना उचित रहता है।

ISSN No. 2583-3316

सड़ी हुई गोबर 25 टन प्रति हैक्टर अंतिम जुताई के समय मृदा में मिला दें। नीम केक 250 किलो प्रति हेक्टर की दर से दे सकते हैं। एजोटोबेक्टर 5, पी.एस.बी. 5, ट्रायकोडर्मा विरिडी 1.25 व सुडोमोनास फ्लुरोसन्स 2.5 कि.ग्रा. प्रति हेक्टर सेंद्रिय खाद में मिलाकर (एक सप्ताह के संवर्धन के बाद) मृदा में मिला देना उचित होता है।

पानी में घुलनशील जैव उर्वरक बूँद-बूँद सिंचाई से भी दे सकते हैं। जैव उर्वरक का रासायनिक उर्वरक के साथ उपयोग ना करें। पानी में घुलनशील जैव उर्वरकों को बूँद-बूँद सिंचाई के साथ अनुशंसित बेसल उर्वरकों के अनुप्रयोग के एक सप्ताह के बाद दिया जाना चाहिए।

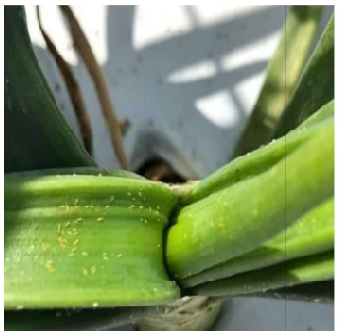

थ्रिप्स किट

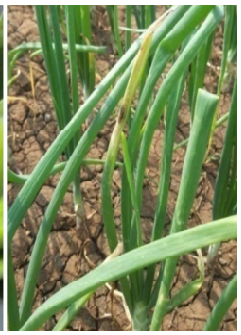

बैंगनी धब्बा

इसके अलावा रासायनिक खाद के रूप में 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 50 कि.ग्रा. पोटाश की मात्रा प्रति हैक्टर प्रत्यारोपण के समय देनी चाहिए। नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा (50 कि.ग्रा.) को दो बराबर भागों में बाँटकर प्रत्यारोपण के 30 व 45 दिनों बाद देनी चाहिए।

जब पौधे में विशेष पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई देते हैं, तब (प्रत्यारोपण के 30-45 और 45-60 दिन दौरान) सूक्ष्म पोषक तत्वों के मिश्रण-IV की 2 ग्रा. मात्रा का प्रति लीटर पानी के अनुसार छिड़काव करे।

खरपतवार प्रबंधन

खरपतवारों को नष्ट करने के लिए 2-3 बार उथली निराई -गुड़ाई प्रत्येक 25-30 दिनों के अंतराल पर करते रहें। यदि प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार का प्रकोप अधिक पाया जाता है, तो पौध प्रत्यारोपण के समय ऑक्सीफ्लोरफेन 23.5% ई. सी. 1-1.5 एम.एल. प्रति लीटर पानी छिड़काव और प्रत्यारोपण से 30-45 दिनों के बाद एक निराई करें। या प्रत्यारोपण से 25 दिनों के बाद ऑक्झीफ्लोरफेन 1-1.5 और क्यूझोलफॉप इथाईल 5% ई. सी. 1 एम.एल. प्रति लीटर पानी छिड़काव और प्रत्यारोपण के 45 दिनों के बाद एक हाथ निराई करें।

प्रमुख कीट एवं रोग

थ्रिप्स कीट और फफूँद ब्लाइट रोग (कोलेटोट्राइकम, बैंगनी धब्बा, स्टेमफिल)

एकीकृत कीट एवं रोग प्रबंधन

- खेतों में फसल चक्र को बढ़ावा दे।
- गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करे।
- ट्रायकोडर्मा विरिडी 0.5-1 कि.ग्रा. व सुडोमोनास फ्लुरोसन्स 1 कि.ग्रा. प्रति एकड़ गोबर की खाद में मिलाकार (एक सप्ताह के संवर्धन के बाद) मृदा में मिला दें, इसके बाद हल्की सिंचाई कर दें। जब भी जैविक पदार्थ का उपयोग करें, तब अन्य किसी रसायन का एक सप्ताह पूर्व व बाद में प्रयोग न करें।
- चूसने वाले कीड़ों की रोकथाम के लिए पौध प्रत्यारोपण से 15 दिन पहले प्याज फसल की सीमा पर मक्के के बीज की बुआई करनी चाहिए।
- पीले चिपचिपे जाल (एफिड के लिए) और नीले रंग के थ्रिप्स कीट के लिए स्थापित करें।
- रोपण पूर्व पौधों की जड़ो का उपचार करें।

प्रबंधन

प्रत्यारोपण के 30 दिन बाद कीट और रोग के प्रकोप के अनुसार 15 दिनों के अंतराल पर क्रमानुसार छिड़काव (प्रति लीटर पानी) कीटनाशी और फफूँदनाशी घोल स्टीकर मिलाकर छिड़काव करें।

- मॅन्कोझेब 2.5 ग्राम / फिप्रोनील 1 एम.एल. (प्रत्यारोपण के 30 दिन बाद)।
- प्रोपिकोनाजोल 1 एम.एल. / कार्बोसल्फान 2 एम.एल. (प्रत्यारोपण के 45 दिन बाद)।
- कॉपर ऑक्सिक्लोराईड 2.5 ग्राम / प्रोफेनोफॉस 1 एम.एल. (प्रत्यारोपण के 60 दिन बाद)।

खरीफ प्याज बल्बों की खुदाई एवं कटाई

आम तौर पर खरीफ मौसम की प्याज फसल में पत्तियों में गिरावट नहीं देखने को मिलती, इसलिए जब पत्तियों का रंग थोड़ा पीला हो जाता है, पत्तियों के शीर्ष भाग सूखने लगते हैं और कंद पर लाल रंजकता विकसित होती है। तब इस प्रकार

ISSN No. 2583-3316

के विकसित आकार वाले कंद युक्त पौधों की खुदाई की जाती है। पत्तियों को पूरी तरह से सूखने के बाद प्याज से 2-2.5 से.मी. लंबी गर्दन (डंडी) छोड़कर काटना चाहिए। यदि *खरीफ* मौसम प्याज की खुदाई में देर होने लगेगी तो जोड़ वाले प्याज और मुख्य फसल मे फूल आने (बोल्टिंग) जैसी समस्या देखने को मिल सकती है। *खरीफ* प्याज फसल में औसतन 10-15 टन / हैक्टर की दर से उपज प्राप्त की जा सकती है। प्रगतिशील प्याज प्याज किसान उन्नत उत्पादन तकनीक अपनाकर 25-3 टन/हैक्टेर खरीफ प्याज की उपज ले रहे हैं।

प्याज फसल की कटाई

निष्कर्ष

खरीफ मौसम की प्याज में पौधशाला प्रबंधन एवं प्याज उत्पादन की उन्नत तकनीक जैसे एकीकृत खाद एवं उर्वरक प्रबंधन, एकीकृत खरपतवार प्रबंधन, एकीकृत कीट और रोग प्रबंधन अपनाकर किसान भाई अच्छी पैदावार एवं अधिक मुनाफा पा सकते है।

संदर्भ

- साबळे पी ए, विजय महाजन, सुषमा सोनपुरे., 2022. नई तकनीक से खरीफ प्याज की खेती. *फलफूल,* मई-जूनः 16-19.
- साबले पी ए और सुषमा साबले., 2023. प्याज बीज उत्पादन की उन्नत प्रौद्योगिकी. *फलफूल,* मार्च -अप्रैलः 38-39.
- साबले पी ए, प्रिति एच दवे और सुषमा साबळे ., 2021. वर्षा मौसम की प्याज में पौधशाला प्रबंधन. *कृषिजीवन,* जुलाई -सितम्बरः 09-12
- Patil S., Nargund V. B., 2017. Field efficacy of chemicals for the management of twister disease of onion. *International Journal of Agricultural Science and Research*, 7 (1): 343-346.
- Sable P. A., Kurubar A. R., Hugar A., 2013. Study of weed management practices on weed dry weight, growth, yield and economics parameter of onion (*Allium cepa* L.). *The Asian Journal of Horticulture*, 8 (1): 269-273.
- Sable P A., Mahajan V., Sonpure S B., 2021. Scientific cultivation of onion. *Indian Horticulture,* March- April, 2021: 16-18.
- Sable, P A., Purane A B and Jadhav S N (2014). Studies on integrated weed management in onion (Allium cepa L.). *Bioinfolet*, 11 (2B): 429-431.
- Sable P A., Jadhav S N and Purane A B (2014). Weed management in onion (*Allium cepa* L.). *Eco. Env. & Cons.*, 20 (4):1853-1855.
- Yogesh P Khade, A Thangasamy and Pranjali Ghodke (2017). Nursery management in onion. *Indian Horticulture,* November- December, 2017: 21-23.

❖❖

ISSN No. 2583-3316

नेपियर घास की उत्पादन तकनीक

हरिशंकर[1], पी. आर. बोबड़े[2], विजय कुमार[3] एवं कमलेश कुमार सिंह[4]

[1]शस्य विज्ञान विभाग, [2]कृषि मौसम विज्ञान विभाग, [3]पौध रोग विज्ञान विभाग, [4]फार्म मशीनरी पावर इंजीनियरिंग विभाग

कृषि विज्ञान केंद्र, कोरिया, इंदिरा गाँधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर

पत्राचारकर्ता: hspainkra89agro@gmail.com

परिचय

नेपियर घास वर्ष में कई कटाई देने वाली एक बहुवर्षीय चारे की फसल है, यह पशुओं के लिए बेहतर चारा है। इसके पौधे गन्ने की भांति होते है, और एक पौधे से 30-35 कल्ले निकलते हैं। इसे हाथी घास भी कहते हैं, संकर नेपियर घास अधिक पौष्टिक एवं उत्पादक होती है। इसके चारे में शुष्क बहर के आधार पर 8-9 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन पाई जाती है। वर्ष भर अधिक उपज, चारा गुणवत्ता एवं पाचनशीलता आदि गुणों के कारण यह किसानों के बीच काफी लोकप्रिय होती जा रही है। बहुवर्षीय फसल होने के कारण इसकी खेती सर्दी, गर्मी व वर्षा ऋतु में भी की जा सकती है, ठण्ड के दिनों में इसकी वृद्धि सुसुप्तावस्था में होने के कारण कम हो जाती है, अधिकतम चारा बरसात एवं गर्मी के महीनों में प्राप्त होता है, इसलिए जब अन्य चारे उपलब्ध नहीं होते उस समय नेपियर घास का महत्व अधिक बढ़ जाता है। इसकी जड़ों को एक बार लगाकर उचित प्रबंधन द्वारा 2-3 वर्षों तक हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। इसके चारे से हे (Hey) भी तैयार की जा सकती है। दुधारू पशुओं के लिए हरा चारा सबसे उपयुक्त माना जाता है। इसके सेवन से पशुओं में दूध उत्पादन बढ़ाता है साथ ही स्वास्थ्य पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है।

जलवायु एवं भूमि

गर्म व नम जलवायु वाले स्थान जहाँ तापमान अधिक रहता है (24.0-28.0 सेल्सियस), वर्षा अधिक होती हो (1000 मि. मी.) तथा वायुमंडल में आर्द्रता अधिक रहती हो, वे क्षेत्र नेपियर घास की खेती के लिए उत्तम मानी जाती है, कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है अधिक ठंडी जलवायु में फसल की वृद्धि नहीं हो पाती क्योंकि उस समय सुसुप्तावस्था में चले जाते हैं । यह घास कई प्रकार की मिट्टियों में उगाई जा सकती है, ऊपरी भूमि, मटियार दोमट मिट्टी, जिसमें प्रचुर मात्र में जीवांश पदार्थ उपस्थित हो एवं अत्यधिक जलभराव न होता हो, इसके लिए सर्वोत्तम मानी जाती है, मृदा का पी.एच. मान 6.5 से 8 के बीच में होना चाहिए।

खेत की तैयारी

यह फसल शीघ्र बढ़वार एवं अत्यधिक उत्पादन के लिय जमीन से काफी मात्र में पोषक तत्व अवशोषित करती है । अतः इसके लिये अच्छे जल निकास एवं अच्छी उर्वरता वाली भूमि उपयुक्त होती है। नेपियर घास लगाने से पूर्व खेत को अच्छी तरह से तैयारी करनी चाहिए एक गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से या डिस्क प्लाऊ से 2-3 जुतायियाँ हैरो कल्टीवेटर या देशी हल से करके पाटे द्वारा भूमि को समतल कर लेना चाहिए, अंतिम जुताई से पूर्व सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट को खेत में बिखेर कर मिला देना चाहिए ।

उन्नत किस्में :- सी.ओ.-3, सी. ओ.(बी.एन.) 4, सी.ओ. (बी.एन.) 5, के.के.एम.-1, **आई.जी.एफ.आर.आई.-3, आई.जी.एफ.आर.आई.-6, आई.जी.एफ.आर.आई.-7, आई.जी.एफ.आर.आई.-10** एवं समूर्ण (डी.एच.एन.-6)।

बीज की मात्रा

नेपियर घास की बुवाई वानस्पतिक भागों द्वारा की जाती है। बुवाई हेतु भूमिगत तना जिन्हें राइजोम कहते हैं, उसे उपयोग में या तने के टुकड़ों (गाँठ) तथा जडोध (रूट स्लिप) द्वारा किया जाता है, बीज की मात्रा या भार उनके लगाने की दूरी पर निर्भर करता है। यदि लाईन की दूरी 2 मीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 30 से.मी. रखते हैं, प्रति हेक्टयर 16500-17000 गाँठ की आवश्यकता पड़ती है। यदि लाईन से लाईन की दूरी 60 सेमी. तथा पौधों से पौधों की दूरी 60 सेमी रखते हैं तो प्रति हेक्टेयर 3,00,000 से 35,000 गाँठों की जरूरत पड़ती है। यदि एक गांठ का उपयोग बीज के लिए कर रहे हैं और लाइन से लाईन की दूरी 60 सेमी. तथा पौधों से पौधों की दूरी 6.0 सेमी रखते हैं तो 15,000 से 2,000 गाँठों (नोड) की जरूरत पड़ती है।

रोपाई का समय व विधि

जहाँ सिंचाई की सुविधा नहीं हो वहा बुवाई जुलाई-अगस्त में करना चाहिए, जहाँ पानी की सुविधा हो वहा पूरी

ISSN No. 2583-3316

साल भर में किसी भी माह में बुवाई किया जा सकता है, बुवाई हमेशा लाईनों में, मेड़ो पर करनी चाहिए। उपयुक्त दूरी पर लाईन बनाकर 2-3 गाँठ वाले टुकड़ों को भूमि में 45 डिग्री के कोण पर इस प्रकार लगाना चाहिए कि एक गाँठ जमीन के अन्दर व दूसरी जमीन से उपर रहे। टुकड़ों का झुकाव उत्तर दिशा के तरफ रखना चाहिए ताकि फसल पर वर्षा का हानिकारक प्रभाव नहीं पड़े, 1 गाँठ बीज की भी बुवाई कर सकते हैं। 1 गाँठ वाली बीज का उपयोग करते समय सबसे पहले 10-15 सेमी. का कुंड बनाकर आँख को उपर के तरफ रखकर पुरे गाँठ को मिट्टी से ढँक देना चाहिए।

कूंडों में बुवाई

खेत को अच्छी तरह से तैयार करते हैं । खेत में उपयुक्त मात्रा में नमी हो । 90 सेमी की दूरी पर हल से कूँड बनाकर कूँड़ में टुकड़े डाल देते हैं और पटेला लगाकर उसे ढ़क देते हैं। 10-15 दिन बाद जब गाँठें उग जाते हैं तब खेत की सिंचाई कर देते हैं । इस विधि में 7-10 हजार तने के टुकड़े प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता हैं। 10-15 क्विंटल जड़ौधीं (4-5 हजार जड़ों के टुकड़े) या तनों के टुकड़े प्रति हे. तक बोने के काम आते हैं।

तुम्बुकिज़ा विधि

यह विधि शुष्क मौसम में भी अन्य पारंपरिक तरीका विधि की तुलना में अधिक चारा की उपज देती है। तुम्बुकिज़ा दो प्रकार के होते हैं, अर्थात् गोल गड्ढे और आयताकार गड्ढे । गोल गड्ढों के लिए 60 सेमी का व्यास और 60 सेमी की गहराई की गड्ढा खोदें। गड्ढों की पंक्तियाँ की दुरी 60 सेमी होनी चाहिए। आयताकार गड्ढों के लिए 60 सेंटीमीटर गहरे और 60-90 सेंटीमीटर चौड़े गड्ढे खोदें उपलब्ध भूमि के आधार पर गड्ढे की लंबाई अलग-अलग हो सकती है गड्ढों के बीच की दूरी 90 सेंटीमीटर होनी चाहिए। दोनों गोल और आयताकार गड्ढे प्रकार के लिए ऊपरी मिट्टी को नीचे की मिट्टी से अलग करें ।1 भाग की ऊपरी मिट्टी में 1 से 2 भाग गोबर की खाद मिलाकर गड्ढों में डालें । प्रत्येक गड्ढे के शीर्ष पर लगभग 15 सें.मी. खाली जगह छोड़ दें । गोल गड्ढों में 5-10 गाँठे की कतारें या एक जड़ के टुकड़े लगायें , आयताकार गड्ढों में, प्रत्येक 90 सेमी लंबाई में 5-10 गाँठें या एकल जड़ के टुकड़े लगाये।

खाद एवं उर्वरक

खेत की तैयारी के समय प्रति हेक्टेयर 15-20 टन सड़ी हुई गोबर या कम्पोस्ट को खेत में डालकर अंतिम जुताई करनी चाहिए, बुवाई के समय 50-60 किलो नाईट्रोजन, 50 -60 किलो फॉस्फोरस व 25-30 किलो पोटाश प्रति हेक्टयर की दर से डालना चाहिए ताकि फसल वृद्धि शीघ्र हो एवं अधिक उत्पादन प्राप्त हो सके बुवाई के पूर्व मिट्टी की जाँच कराकर सिफारिस के अनुसार उर्वरक देना अधिक लाभदायक होता है। प्रत्येक कटाई के बाद 30 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर छिड़काव करना चाहिए।

सिंचाई प्रबंधन

नेपियर घास की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए यह जरुरी है की खेत में पर्याप्त नमी बनी रहनी चाहिए। हल्की भूमि में भारी भूमि की अपेक्षा अधिक सिंचाई की आवश्यकता होती है, गर्मियों में 10-12 दिन तथा सर्दियों में 20-25 दिन के बाद सिंचाई करनी चाहिए वर्षा ऋतू में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है लेकिन जल निकाशी की सुविधा जरुर करनी चाहिए। प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई अवश्य करना चाहिये।

निराई गुड़ाई एवं खरपतवार प्रबंधन

बुवाई के 15 दिन के बाद अंधी गुड़ाई करनी चाहिए, एवं प्रत्येक कटाई के बाद कतारों के बीच में गुडाई करनी चाहिए। इससे वायु संचार बढ़ता है तथा भूमि की जल धारण क्षमता भी बढ़ती है, जिससे फसलों की बढ़वार अच्छी होती है फसल लगाने के 2-3 माह तक खरपतवार अधिक होते हैं। अतः निराई गुड़ाई कर नियंत्रण करना चाहिए। वर्ष में दो बार (वर्षा प्रारंभ होने से पूर्व एवं सर्दियों के अंत में लाईनों के बीच में जुताई करना चाहिए, रासायनिक खरपतवार नियंत्रण हेतु एट्राजीन 3 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के तुरंत बाद छिड़काव करने से खरपतवारों का नियंत्रण हो कर सकते हैं। हर कटाई के बाद और खाद डालने से पहले हलकी गुड़ाई कर देनी चाहिए।

अंतर सस्यन (इन्टर क्राप्पिंग)

आम तौर पर नेपियर घास के साथ दलहनी (फलियों) वाले चारा को लगाने से शुष्क पदार्थ की उपज और चारे के कच्चे प्रोटीन में वृद्धि होती है, जो अनुकूल हैं और उच्च पैदावार देते हैं। उनमें निम्न फसलें शामिल हैं: अधिक ऊँचाई पर जायंट वेच (विसिया डेसीकार्पा), सिल्वरलीफ़ डेस्मोडियम (डेस्मोडियम अनिनाटम), स्टाइलो (स्टाइलोसेंथेस गुआनेंसिस) और ग्लाइसिन (नियोनोटोनिया वाइटी) उच्च और मध्यम ऊंचाई में:- सेंट्रो (सेंट्रोसेमा प्यूबेसेंस), सिराट्रो (*मैक्रोप्टिलियम एट्रोपुरप्यूरम*), बटरफ्लाई मटर (*क्लिटोरिया टर्नाटिया*) और बरबट्टी (*डोलिकस लबलब*), अर्ध-शुष्क तटीय क्षेत्रों में स्टाइलो का अंतर सस्यन कर सकते ह। इस फली घास को 1 मीटर x 1 मीटर की दूरी पर और घास की पंक्तियों के पास या पंक्तियों के बीच 1-4 किग्रा/हेक्टेयर की दर से लगाया जाना चाहिए। दलहनी (फलियाँ) वाले चारा फसलें खरपतवारों को नियंत्रित

करने में मदद करती हैं और घास के साथ प्रतिस्पर्धा किये बिना हरा चारा उत्पादन में योगदान करती हैं।

कीट एवं रोग प्रबंधन

नेपियर घास एक चारे की फसल है अतः इसकी बार बार कटाई के कारण कीट एवं बिमारियों का प्रकोप कम होता है। यदि भूमि में दीमक की समस्या हो तो सिंचाई के साथ क्लोरोपाइरीफॉस 2 ली. प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए।

ऑक्सलेट की मात्रा

नेपियर घास में 3-6% ऑक्सलेट होता है। यह जानवरों के गुर्दे और शरीर के कैल्शियम की कमी को नुकसान पहुँचा सकता है । इसलिए, सावधानी बरतने के लिए और शरीर से कैल्शियम की कमी को संतुलित करने के लिए, पशु को खनिज मिश्रण के साथ डायकैल्शियम फॉस्फेट खिलाया जाना चाहिए या पशु को फलीदार चारे के साथ नेपियर घास और मूँगफली की खली जिसमें कैल्शियम होता है, खिलाना चाहिए। पीने के पानी के माध्यम से भी कैल्शियम की पूर्ति की जा सकती है, चूने के पानी का आधा लीटर सतह पर तैरने वाला दिया जा सकता है या ऑक्सालेट को कम करने के लिए इसे रोजाना फ़ीड पर छिड़का जा सकता है। चारे की तुड़ाई के लम्बे अन्तराल बनाये जाने चाहिये।

कटाई व ऊपज

नेपियर घास की पहली कटाई बुवाई के 70-80 दिन बाद करनी चाहिये। इसके बाद 35-40 दिन के अन्तराल पर कटाई करते रहना चाहिये। कटाई जमीन से 10-15 सेमी. की ऊँचाई से करनी चाहिए। इस प्रकार कटाई करने से हर कटाई पर 1-1.5 मी. लम्बाई की फसल मिलती रहती है। अधिक समय तक कटाई नहीं करने पर इसके तने सख्त हो जाते हैं और उसमे रेशे की मात्रा बढ़ जाती है; जिसके कारण पशु इसे खाना पसंद नहीं करते हैं और साथ ही साथ चारे की पाचनशीलता कम हो जाने के कारण पशुओं का दूध उत्पादन कम हो जाता है, वर्ष भर में नेपियर से 5-6 कटाई ली जा सकती है जिससे 1,000-1,200 क्विंटल तक हरा चारा प्रति हेक्टयर प्राप्त किया जा सकता है, जिसमें 15-20 प्रतिशत शुष्क पदार्थ होता है। इसके चारे में 7-12 प्रतिशत प्रोटीन होता है व इसकी पाचनशीलता 50-70 प्रतिशत होती है।

पुनरुधार

कई वर्षों तक लगातार कटाई करने पर मृत कल्लों की संख्या बढ़ती रहती है। अतः वर्ष प्रारंभ होने के पूर्व मृत कल्लों को हटा देना चाहिये। इन्ही पौधों से जड़ को निकाल कर नयी जगह लगाया जा सकता है या अन्य किसानों को बेचा जा सकता है। 2 साल की वृद्धि के बाद मृत टिलर क्लंप की आकर सहित टिलरों की संख्या में वृद्धि बहुत बढ़ जाता है और अप्रबंधनीय हो जाता है, इसलिए कल्लों का थिनिंग करना फसलों को और किफायती बना देता है, क्वार्टरिंग हर साल या जब क्लंप गहरे गुच्छे और बहुत बड़े हो जाते हैं तब करना चाहिए। सबसे पहले क्लंप को चार भागों में विभाजित कर देना चाहिए फिर उसमे से तीन भाग को निकल देना चाहिए, जिसे क्वार्टरिंग कहते हैं।

निष्कर्ष

नेपियर घास बहुत ही शीघ्र बढ़ने वाली एवं अत्यधिक उत्पादन देने वाली बहुवर्षीय चारा फसल है, नेपियर घास को लगाना और लगातार अच्छी बढ़वार में बनाए रखना आसान है; क्योंकि यह सूखा सहनीय; काटने के लिए उपयुक्त और साइलेज एवं हे (हे) बनाने के लिए बहुत अच्छा है। इसकी उच्च उपज क्षमता, प्रसार में आसानी, और व्यापक पारिस्थितिक सीमा के भीतर प्रबंधन में आसानी के कारण दूसरों दुसरे घासो की तुलना में लाभदायक है। नेपियर में पोषक-विरोधी कारक (ऑक्सलेट) होता है, यह पशुओं के शरीर पर कैल्शियम के स्तर को कम करके दुग्ध ज्वर का कारण बन सकता है, इसलिए इसे प्रसव से दो सप्ताह पहले प्राथमिकता नहीं दी जानी चाहिए। घास अत्यधिक बीजों का उत्पादन नहीं कर सकती है और जो उत्पादित होते हैं वे सामान्य रूप से बहुत छोटे, हल्के, खराब गुणवत्ता वाले होते हैं और स्पाइकलेट के बिखरने की सम्भावना अत्यधिक होती है।

सन्दर्भ

- चारा फसल उत्पादन की उन्नत तकनीक IGKV/heye./Skeämyue.@2017/02
- कृषि दर्शिका 2022, इंदिरा गाँधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)
- इंडियन फार्मिंग 69(02): 23-25; फरवरी 2019
- ई किसान, अगस्त 30, 2021
- केनिया कृषि अनुसंधान संस्थान, नैरोबी, पीओ बॉक्स 57811
- तमिलनाडू कृषि विश्वविद्यालय

❖❖

ISSN No. 2583-3316

मैदानी क्षेत्रों में अधिक लाभ हेतु स्ट्रॉबेरी की वैज्ञानिक उत्पादन तकनीक

रिद्धिमा त्रिपाठी[1], वी. के. त्रिपाठी[2*] एवं देवी सिंह[3]

[1एवं 3]उद्यान विज्ञान विभाग, शुआट्स, प्रयागराज

[2]उद्यान विज्ञान विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर

पत्राचारकर्ता: drvktripathisa@gmail.com

परिचय

स्ट्रॉबेरी उथली जड़ वाला एक साकीय पौधा है, जिसमें संयुक्त पत्तियाँ पाई जाती है। यह मानव द्वारा विकसित एक सकर पौधा है, जिसका विकास फ्रेगारिया वर्जिनियाना और फ्रेगारिया चिलियोऐंनसिस के संकरण से हुआ है। इसका सर्वप्रथम उत्पादन फ्रांस में किया गया था। इस पौधे का नाम पहले स्ट्रीवबेरी था, जिसे बाद में बदलकर स्ट्रॉबेरी कर दिया गया। स्ट्रॉबेरी के फल में एक मांसल पत्र में कई छोटे व्यक्तिगत फल लगे होते हैं। फल की सतह पर कई की संख्या में लगी भूरी या सफेद बिंदुवत संरचनायें, इसके बीज होते हैं, जिन्हें अचेन्स कहा जाता है। स्ट्रॉबेरी जिसकी खेती दुनिया भर में की जाती है, यह अपने मीठे और स्वादिष्ट फलों के लिए प्रसिद्ध है, जो एक विशिष्ट सुगंध, रसदार बनावट और आकर्षक लाल रंग के होते हैं। दुनिया भर में लोग बड़ी मात्रा में स्ट्रॉबेरी का सेवन ताजे फल के रूप में या फलों के रस के रूप मे या प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों के रूप में करते हैं। इसका फल खाने में हल्का खट्टा और मीठा होता है। इसके फलों का उपयोग आइसक्रीम, केक, मिल्कशेक या चॉकलेट आदि को बनाने में भी बहुतायत मात्रा में किया जाता है।

स्ट्रॉबेरी की खेती आमतौर पर पहाड़ी इलाके में की जाती है। लेकिन मौसम के आधार पर कई प्रकार की विकसित किस्मों के साथ-साथ उत्पादन तकनीक में सुधार के कारण वर्तमान में इसकी खेती मैदानी क्षेत्रों के किसी भी राज्य में, जहाँ सिंचाई एवं जल निकास की उचित सुविधा हो। तापक्रम अप्रैल माह से पूर्व 40 डिग्री सेल्सियस से अधिक ना जाता हो, में सफलतापूर्वक की जा सकती है। भारत में स्ट्रॉबेरी की खेती पंजाब, हरियाणा, हिमांचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश के साथ उत्तर पूर्व के क्षेत्रों में व्यवसायिक स्तर पर की जाती है।

स्ट्रॉबेरी के फायदे

स्ट्रॉबेरी के फलों में एंटीऑक्सीडेंट गुण के साथ पॉलीफेनोल कंपाउंड पाए जाते हैं, जो मानव स्वास्थ्य के लिए अधिक फायदेमंद साबित हो सकते हैं। इसके फल विटामिन सी (50-70 मिलीग्राम) के साथ रेशा एवं कार्बोहाइड्रेट से भरपूर होते हैं। इसमें मौजूद विटामिन-सी हमारी-आपकी त्वचा और बालों का भी ख्याल रखने में सहायक हैं। वैसे तो स्ट्रॉबेरी खाने के बहत से फायदे है पर हम कुछ खास के बारे में बात करते हैं जैसे-स्ट्रॉबेरी एक कम कैलोरी वाला फल है, जिसके एक कप जूस में महज 50 कैलोरी होती है और यह फ़ाइबर से भरपूर होता है, जो हमारे पाचन में सहायक होता है, जिससे स्ट्रॉबेरी के फलों का हम वजन कम करने के लिए भी उपयोग कर सकते है। इसके फलों का सेवन शरीर में रक्त अल्पता की कमी को भी दूर करता है और कोलेस्ट्रॉल को कम करता है, जिससे ब्लड प्रेशर नियंत्रित रखने में मदद मिलती है।

स्ट्रॉबेरी की किस्में

मैदानी क्षेत्रों में स्ट्रॉबेरी की अधिक उपज वाली प्रजातियों में चांडलर, सेल्वा, बेलरूबी, चैपटिया अनुपम, सैंगा सैनाना, स्वीट अर्ली, टयोगा, पुजारो, कैमारोजा, स्वीट चार्ली, विंटर डॉन, फर्न, इत्यादि प्रमुख हैं। चांडलर प्रजाति के फल आकार में बड़े, देखने में सुंदर और नरम होते हैं। स्वीट चार्ली के फल मीठे होने के साथ-साथ जल्दी तैयार होते हैं, जबकि कैमारोजा के फल आकार में बड़े, देखने में अच्छे होने के साथ-साथ पौधों में जल्दी फल आते हैं और इस किस्म के पौधे वायरस से भी रोधक होते हैं।

स्ट्रॉबेरी उत्पादन के लिए उपर्युक्त जलवायु

स्ट्रॉबेरी मुख्यतः शीतोष्ण जलवायु का पौधा है, लेकिन तकनीक में सुधार एवं प्रजातियों के विकास के कारण अब स्ट्रॉबेरी की खेती उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय जलवायु वाले स्थानों में भी, जहाँ सिंचाई की उचित सुविधा हो, तापक्रम अप्रैल माह से पूर्व 40 डिग्री सेल्सियस से अधिक न पहुँचता हो, वहाँ पर भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। मैदानी क्षेत्रों

ISSN No. 2583-3316

में स्ट्रॉबेरी के पौध रोपण हेतु उत्तम समय सितंबर से अक्टूबर के मध्य माना जाता है, परंतु ठंडी जलवायु वाले स्थानो में इसके पौधों का रोपण फरवरी-मार्च में भी किया जा सकता है। स्ट्रॉबेरी उत्पादन के लिए उपर्युक्त तापमान 13-28 डिग्री सेल्सियस होता है।

स्ट्रॉबेरी उत्पादन के लिए भूमि का चुनाव

स्ट्रॉबेरी उत्पादन के लिए मुख्यतः कार्बनिक पदार्थों से भरपूर गहरी, रेतीली दोमट मिट्टी सबसे अच्छी होती है। मिट्टी मे अच्छी तरह से जल निकास होना चाहिए। वसंत में देर तक गीले रहने वाले क्षेत्रों से दूर रहें। रोपण स्थान को पूरी धूप मिलनी चाहिए। स्ट्रॉबेरी उत्पादन के लिए उपर्युक्त पी एच मान 5-6.5 के बीच में होना चाहिए। इसके अलावा बलुई दोमट ओर लाल मिट्टी भी स्ट्रॉबेरी के लिए उपर्युक्त मानी जाती है।

स्ट्रॉबेरी उत्पादन के लिए भूमि की तैयारी

मैदानी क्षेत्रों में स्ट्रॉबेरी की रोपाई सितंबर से अक्टूबर के मध्य की जाती है। इसके लिए खेत को तैयार करने के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके, खेत को खुला छोड़ दे, ताकि खेत में मौजूद खरपतवार और कीट नष्ट हो जायें। इसके बाद कल्टीवेटर से खेत की 2-3 बार आड़ी-तिरछी गहरी जुताई कर खेत को पाटा लगाकर समतल कर लें। आखरी जुताई पर 10-15 कुंटल पुरानी सड़ी गोबर की खाद 50 से 60 किलोग्राम पोटाश और 80 से 100 किलोग्राम फॉस्फोरस को प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में डालने के बाद खेत की कल्टीवेटर से जुताई कर, खेत को पाटा लगाकर समतल कर लें। इसके पश्चात् खेत में उठी हुई क्यारियों को तैयार कर लेते हैं, क्यारियों की चैड़ाई 2.5-3.0 फीट रखते हैं तथा क्यारियों से क्यारियों के बीच की दूरी लगभग 1.5 फीट रखते हैं। खेत में सिंचाई के लिए मुख्यतः ड्रिप सिस्टम का प्रयोग करे। ड्रिप सिस्टम की पाइप लाइन बिछने के बाद क्यारियों पर प्लास्टिक मल्चिंग कर दें। पौधे लगाने के लिए मल्चिंग में 20-30 सेंटीमेटर की दूरी पर छेद कर देते हैं। इसके बाद पौधे की रोपाई सावधानीपूर्वक कर देते हैं।

स्ट्रॉबेरी की रोपण सामग्री

स्ट्रॉबेरी के पौधों का रोपण मुख्यतः रनर तथा क्राउन से किया जाता है। रनर के द्वारा प्रवर्धन क्राउन की तुलना मे अधिक अच्छा माना जाता है। स्ट्राबेरी का व्यावसायिक तौर पर प्रसारण के लिए फलन के बाद मई-जून में जब स्ट्राबेरी में रनर निकलने लगें और जब इसके प्रति रनर से 15 से 20 पौधे बन जायें तब शुरू के 5-6 पौधों का ही उपयोग मुख्य खेत में रोपण करते हैं। मुख्य उत्पादक खेत में प्रारम्भिक अवस्था में निकलने वाले रनर्स को तोड़ देने से उपज अच्छी मिलती है। विभिन्न रोगों से बचाव के साथ-साथ अधिक गुणवत्ता युक्त उत्पादन हेतु टिश्यू कल्चर तकनीक से तैयार पौधों का भी उपयोग रोपण में करते हैं।

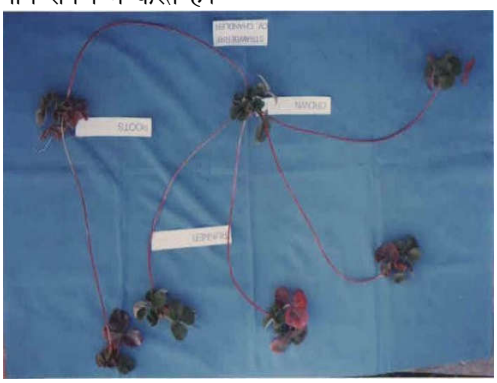

स्ट्रॉबेरी के रनर

स्ट्रॉबेरी के फल

स्ट्रॉबेरी में सिंचाई तथा खाद की आवश्यकता

स्ट्रॉबेरी में पौधों की सिंचाई, पौधे की किस्म व मौसम की दशा पर निर्भर करती है। सामान्यतः अक्टूबर-नवम्बर में ड्रिप सिस्टम को प्रतिदिन 40 मिनट (20 मिनट सुबह एवं 20 मिनट शाम) तक अवश्य चलायें। यह समय फसल की आवश्यकता के अनुसार घटाया-बढ़ाया भी जा सकता है। स्ट्रॉबेरी मे फल आने से पहले फव्वारे द्वारा सिंचाई कर सकते हैं। लेकिन फल आने के बाद टपक विधि से ही सिंचाई करें, जिससे फल खराब न होने पायें।

स्ट्रॉबेरी मे 10-15 कुंटल पुरानी सड़ी गोबर की खाद, 80 से 100 किलोग्राम नत्रजन, 80 से 100 किलोग्राम फॉस्फोरस और 50 से 60 किलोग्राम पोटाश को प्रति हैक्टेयर की दर से खेत में डालते हैं। गोबर की खाद तथा

ISSN No. 2583-3316

फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा को खेत की अंतिम जुताई के समय ही मिट्टी में मिला कर पाटा लगा देते हैं। नत्रजन की एक तिहाई मात्रा को रोपाई के 15 दिन बाद तथा शेष दो बराबर की मात्रा को जनवरी तथा मार्च के महीने में खेत में डाल देते हैं।

जैविक खेती करने पर प्रति हैक्टेयर 5 से 6 कुंटल वर्मीकंपोस्ट तथा 5.0 से 8.0 ग्राम एजोटोवेक्टर और 5.0 से 8.0 ग्राम पीएसवी को प्रति पौधे की दर से डालते हैं। साथ ही खेत का उपचार पौधरोपण से पूर्व ट्राइकोडर्मा से करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

स्ट्रॉबेरी का फल व पौधा दोनों ही बहुत नाजुक होते हैं। पौधों के पास मल्चिंग के पूर्व 20-25 दिन के अंतराल पर निराई व गुड़ाई की जानी चाहिए। यदि खेत में मोथा का प्रकोप हो तो खेत की तैयारी के समय, पौधरोपण से 5 सप्ताह पूर्व किसी एक प्रभावशाली खरपतवार नाशी जैसे-लीडर या राउंडअप का प्रयोग करके मोथा को नष्ट करने के बाद ही फसल लगाए।

स्ट्रॉबेरी में मल्चिंग का उपयोग एवं लाभ

स्ट्रॉबेरी में कार्बनिक और अकार्बनिक दोनों प्रकार की मल्च का प्रयोग किया जाता है। मल्चिंग के प्रयोग करने से खरपतवारों का जमाव नहीं होता, नमी संरक्षित रहती है तथा जब फल लगने लगते हैं तो वह सीधे भूमि के संपर्क में नहीं आते हैं। इससे फलों में सड़ाव नहीं होने पाता, जिसमें इसका प्रयोग करते हैं। इसमें काली और सफेद दोनों प्रकार की पॉलीथीन का प्रयोग कर सकते हैं। रोपड़ से पूर्व जमीन पर पॉलीथीन को बिछाकर उसमें छेद करके पौधों का रोपण करते हैं जबकि सूखी घास, पुआल और पेड़ों का प्रयोग पौधे के किसी भी अवस्था में किया जा सकता है साथ ही इनके सड़ाव से भूमि में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ जाती है।

स्ट्रॉबेरी की मल्चिंग में पॉलीथिन का प्रयोग

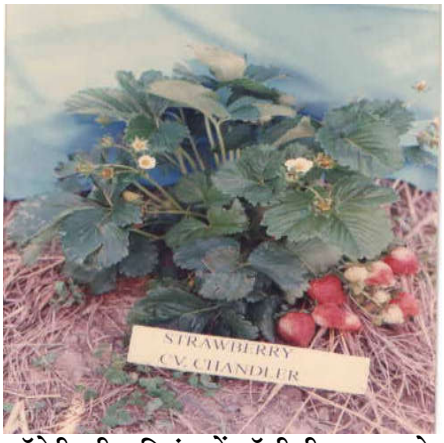

स्ट्रॉबेरी की मल्चिंग में पॉलीथीन का प्रयोग

बीमारी व कीट नियंत्रण

पत्ती धब्बा रोग: स्ट्रॉबेरी में यह सबसे आम बीमारी है। इसमे प्रारम्भ में छोटे गहरे बैंगनी गोल आकार के धब्बे पत्ती की ऊपरी सतह पर दिखाई देते हैं। धब्बे आपस मे मिलकर बड़े धब्बे हो जाते हैं, जिससे अंततः पत्ती मर जाती है। इस रोग के प्रबंधन के लिए सर्वप्रथम हल्की सिंचाई करें और रोग ग्रशित पौधे को खेत से बाहर निकाल दें। रोग के अधिक बढ़ जाने पर किसी भी फफूँदी नाशक जैसे मैंकोजेब व मायक्लोब्यूटानिल का प्रयोग कर सकते हैं।

एन्थ्रेक्नोज (ब्लैक स्पॉट) रोग: पत्तियों पर गोल काले या हल्के भूरे रंग के घाव बनते हैं। पौधे बौने और पीले हो जाते हैं और रोग की भयानकता बढ़ने पर पौधे मुरझाकर गिर जाते हैं। रोग की प्रारंभिक अवस्था में डेकोनिल या किसी अन्य कॉपर युक्त कवकनाशी का छिड़काव करें।

रेड कोर: प्रभावित पौधे छोटे आकार के रहते हैं तथा पत्तियाँ नील-हरित शैवाल के रंग की प्रतीत होती है। प्रभावित पौधे की जड़ों को तोड़कर देखने से उनका मध्य भाग लाल रंग का दिखाई पड़ता है। नियंत्रण के लिए संस्तुत मात्रा में फॉस्फोरस का प्रयोग करें।

थ्रिप्स: इस कीट के शिशु व वयस्क दोनों ही पौधों का रस चूस कर नुकसान करते हैं। इनका प्रकोप फूल आने के समय अधिक होता है। इसके नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 2 मिली या डाईमेथोएट 30 ईसी को एक मिली प्रति लीटर का घोल बनाकर 10 से 15 दिन के अंतराल पर दो या तीन बार छिड़काव करें।

इसके अतिरिक्त एफिड, लाल मकड़ी, सफेद मक्खी

ISSN No. 2583-3316

आदि कीड़े भी पत्तियों से रस चूसकर फसल को हानि पहुँचाते हैं। सैप विटिल नामक कीड़ा पके हुए फलों में छेद करके रस चूसता है। इसे नियंत्रण के लिए जैविक खेती कर रहे किसान भाई नीम के तेल या साइट्रस आधारित कीटनाशक तेल का उपयोग करें अन्यथा क्षति की स्थिति में कोई भी व्यवस्थित कीटनाशक का प्रयोग करके फसल को बचाना अति आवश्यक होता है।

स्ट्राबेरी के फलों की पुनेट में पैकिंग

तुड़ाई का समय और विधि

स्ट्रॉबेरी के पौधों से 4-5 महीने में पैदावार होने लगती है। इसके फलों की तुड़ाई, फल का रंग 70 प्रतिशत लाल हो जाने पर किया जाता हैं। मैदानी क्षेत्रों में स्ट्रॉबेरी फरवरी से अप्रैल महीने के बीच पकती है। इसकी खेती में अधिक सावधानी इसकी तुड़ाई पर रखनी होती है क्योंकि उसमें हल्की सी चूक भी पूरी कमाई को तहस-नहस कर सकती है। फलों को सावधानीपूर्वक डंठल सहित तोड़ते हैं और फलों को पारदर्शी प्लास्टिक के डिब्बे (जिन्हें पुनेट कहते हैं) में पैक करते हैं।

उपज

सामान्य ढंग से देखभाल की गई स्ट्रॉबेरी की फसल से 100-125 कुंटल प्रति हेक्टेयर फल प्राप्त हो जाते हैं। यह स्ट्रॉबेरी की किस्म, भूमि की उर्वराशक्ति और जलवायु पर भी निर्भर करता है ।

पैकिंग एवं विपणन

अत्याधिक नाजुक होने के कारण से स्ट्राबेरी के फलों को छोटे एवं पारदर्शी प्लास्टिक के डिब्बे (जिन्हें पुनेट कहते हैं) में पैक करते हैं। एक पुनेट में लगभग 150 से 200 ग्राम फल भरा जाता है। इन भरे हुए डिब्बों को गत्ते के दो टुकड़ों के बीच रखकर टेप से चिपका देते हैं। इस प्रकार से पैक किये गये डिब्बों को सड़क एवं रेलमार्ग द्वारा दूरस्थ स्थानों तक पहुँचाया जाता है। सुरक्षित एवं क्षति रहित परिवहन एवं विपणन के लिए वातानुकूलित वाहनों को प्रयोग में लाते हैं। तुड़ाई के तुरंत बाद फलों का विपणन करना पड़ता है। यदि तुड़ाई के बाद फलों को शीत गृह में नहीं रखा जाता है तो वे 2 दिन में ही खराब हो जाते हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार से वैज्ञानिक उत्पादन तकनीक को अपनाकर एवं देखभाल करके किसान भाई अपनी फसल से दो से तीन लाख रुपए का शुद्ध लाभ प्रति हेक्टेयर की दर से प्राप्त कर सकते हैं।

❖❖

Pen to a Book

A Small journey from a pen to a book,
keeping the thoughts with their struggle.

STEP TO A STEP FOR PUBLICATION

1. SUBMIT YOUR BOOK ON OUR PORTAL OR SEND US ON E-MAIL
2. GET THE ISBN NUMBER
3. PUBLISH YOUR BOOK IN A E-BOOK PORTAL ALONG WITH FEW HARD COPIES
4. GET THE ROYALTY

Agro India Publications
Add. 5, Vivekananda Marg
Opp. Hotel R INN
Prayagraj – 211003

: 7505907954/9565006333
agroindiapublications@gmail.com

ISSN No. 2583-3316

ढींगरी मशरूम उत्पादनः बेरोजगार युवाओं के लिए स्टार्ट-अप के लिए एक आदर्श घटक

रघुवीर सिंह[1]* एवं अश्विनी सूर्यवंशी[2]

[1]पादप रोग विज्ञान, [2]भूमि और जल प्रबंधन अभियांत्रिकी

भा.कृ.अनु.प.-पू.प.कृ. अनुसंधान परिसर, अरुणांचल प्रदेश केंद्र, बसर

पत्राचारकर्ताः singhraghuveer@gmail.com

परिचय

ढींगरी मशरूम में अच्छी गुणवत्ता वाली वनस्पति प्रोटीन का उत्कृष्ट स्रोत होता है और कम समय में प्रति इकाई क्षेत्र में उच्चतम प्रोटीन का उत्पादन कर सकता है। ढींगरी मशरूम उत्पादन को एक अत्यधिक लाभदायक और पर्यावरण की दृष्टि से स्थायी उद्यम माना जाता है, जो प्रचुर मात्रा में कृषि अपशिष्टों के पुनर्चक्रण और प्रबंधन में मदद करता है, जो अन्यथा कुछ किसानों द्वारा खेत में जला दिया जाता है। मशरूम में उत्कृष्ट व्यवसाय के अवसर हैं, जिन्हें किसी भी किसान/उम्मीदवारों/कृषि-पेशेवरों द्वारा ऊर्ध्वाधर स्थानों का उपयोग करके कम निवेश और न्यूनतम स्थान के साथ स्टार्ट-अप के रूप में चुना जा सकता है। ढींगरी मशरूम के उत्पादन के बाद भी मशरूम की भुरभुरी खाद का उपयोग सब्जियाँ उगाने के लिए, वर्मीकम्पोस्टिंग में जैव रूपांतरण के लिए किया जा सकता है या जैविक समृद्ध सब्जियों को उगाने के लिए उपयोग किया जा सकता है। कुटीर रोजगार सृजन के लिए शहरी और उप-शहरी क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं के लिए ढींगरी मशरूम उत्पादन तकनीक अत्यधिक आदर्श है, जो उनकी आजीविका और पोषण सुरक्षा में सुधार करने में सहायक हो सकती है।

एक लाभदायक उद्यम के रूप में ढींगरी मशरूम स्पॉन उत्पादन इकाई की स्थापनाः ढींगरी मशरूम स्पॉन उत्पादन एक लाभदायक कृषि व्यवसाय मॉडल/उद्यम है और कम समय में न्यूनतम निवेश के साथ शुरू किया जा सकता है। भारत में कुटीर या प्राकृतिक हवादार उत्पादन और नियंत्रित परिस्थितियों में उत्पादन इकाइयों के रूप में धीरे-धीरे बढ़ती लोकप्रियता के कारण उच्च गुणवत्ता वाले ढींगरी मशरूम स्पॉन की माँग दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। ढींगरी मशरूम स्पॉन उत्पादन इकाई के सफल उद्यम की स्थापना के लिए व्यावहारिक प्रशिक्षण (3-5 दिन) की आवश्यकता होती है और मूल सूक्ष्म जैविक उपकरण जैसे आटोक्लेव, लैमिनार फ्लो, हॉट एयर ओवन और एयर कंडीशनर और दो कमरे की खरीद के लिए मोटे तौर पर रु. 4-6 लाख की आवश्यकता होती है। ढींगरी मशरूम स्पॉन का उत्पादन तीन सरल चरणों में किया जा सकता है,

क. पहला चरणः अनाज के सबस्ट्रेटस को भिगोकर, धोकर, उबालकर मशरूम स्पॉन सबस्ट्रेटस तैयार करना।

ख. दूसरा चरणः 121°C पर ऑटोक्लेव की मदद से पॉली प्रोपाइलीन बैग में तैयार सबस्ट्रेटस का स्टरलाइज़ेशन एक घंटे के लिए।

ग. तीसरा चरणः मदर स्पॉन के साथ पहले इनोक्यूलेटेड सबस्ट्रेटस का इनोक्यूलेशन और इनक्यूबेशन, जो टिश्यू कल्चर द्वारा मशरूम के माल्ट एक्सट्रेक्ट एगर मीडियम या पोटैटो डेक्सट्रोज एगर मीडियम पर तैयार किया जा सकता है और ये टिश्यू कल्चर माईसीलियम का उपयोग बोतलों में विसंक्रमित दानों पर मदर स्पॉन को उगाने के लिए किया जाता है और इस मदर स्पॉन का उपयोग व्यावसायिक स्पॉन के गुणन/उत्पादन में किया जाता है। मदर स्पॉन (300 ग्राम) की एक बोतल 25-30 पॉलीप्रोपाइलीन बैग के लिए पर्याप्त है और इनोक्यूलेशन के बाद, इनोक्यूलेटेड बैग को परिवेश के तापमान या 24°C पर इनक्यूबेट किया जाता है। एकीकृत बागवानी विकास मिशन, भारत सरकार मशरूम स्पॉन उत्पादन इकाई की स्थापना के लिए 15 लाख रुपये की कुल लागत का 40% अनुदान प्रदान कर रही है।

ढींगरी मशरूम उत्पादनः ढींगरी मशरूम *(प्लुरोटस साजोर-काजू, प्लुरोटस फ्लोरिडा, प्लुरोटस पल्मोनरीस* और

ISSN No. 2583-3316

प्लुरोटस फ्लैबेलेटस) की वैज्ञानिक खेती को स्थानीय रूप से उपलब्ध फसल अवशेषों/पर विकसित किया गया है।

सब्सट्रेट तैयार करना: ढींगरी मशरूम को विभिन्न फसल अवशेषों/ जैसे धान के भूसे, मक्का के डंठल और सूखा जंगली घास पर उगाया जा सकता है। चूँकि धान की पुआल आसानी से उपलब्ध और सस्ती होती है, इसलिए इसका व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। धान का भूसा ताजा और अच्छी तरह से सूखा होना चाहिए। धान के भूसे को 3-5 सेंटीमीटर के टुकड़ों में काट लें और 8-10 घंटे के लिए ताजे पानी में भिगो दें। तार की जाली के फ्रेम पर फैलाकर पुआल से अतिरिक्त पानी निकाल दें।

पाश्चराइजेशन: सब्स्ट्रेट के पाश्चराइजेशन से संदूषण की समस्या कम हो जाती है और उच्च और लगभग निरंतर पैदावार मिलती है। इसे निम्न तरीकों से किया जा सकता है।

गर्म पानी से उपचार: एक चौड़े मुँह वाले कंटेनर में पानी उबालें। गीले सब्सट्रेट को बोरी में भरें और खुला भाग को बंद कर दें। भरे हुए बैग को लगभग 30-40 मिनट के लिए 80-85°C के गर्म पानी में डुबोयें। तैरने से बचने के लिए, इसे किसी भारी सामग्री से दबायें। पाश्चुरीकरण के बाद, अतिरिक्त गर्म पानी को कंटेनर से निकाल देना चाहिए ताकि इसे अन्य ढेर के लिए फिर से इस्तेमाल किया जा सकें। पाश्चुरीकरण प्राप्त करने के लिए सभी ढेर के लिए गर्म पानी का तापमान 80-850°C पर बनायें रखने के लिए देखभाल की जानी चाहिए।

बीजाई/स्पॉनिंग: जब पाश्चुरीकृत सब्सट्रेट ठंडा हो जाता है, तो यह स्पॉनिंग के लिए तैयार होता है। इस स्तर पर, सब्सट्रेट नमी लगभग 70% होनी चाहिए। स्पॉनिंग आमतौर पर स्वच्छ वातावरण में की जाती है। स्पॉन को संभालने से पहले हाथों को अल्कोहल से कीटाणुरहित करना चाहिए। स्पॉन को पाश्चुरीकृत सब्सट्रेट में 40-50 ग्राम स्पॉन प्रति 1 किलोग्राम गीले सब्सट्रेट में अच्छी तरह मिलाया जाता है। सबसे व्यापक रूप से पारदर्शी पॉलीथीन बैग (20 x 30 सेमी आकार) का उपयोग होता है। ऐसा बैग लगभग 8 किलो गीला सब्सट्रेट से भरा होता है और बैग के दो-तिहाई स्तर तक हाथ से दबायें। बैग को ऊपर से बाँधकर बंद कर दिया जाता है। बैग में हवा के लिए, लगभग 10-15 छोटे छेद किए जाते हैं, यहाँ तक "कि अतिरिक्त पानी निकालने के लिए भी। अब बैग्स को रैक में साफ और अंधेरी जगह में रखा जाना चाहिए। फर्श पर दिन में दो बार पानी का छिड़काव करके तापमान 25 डिग्री सेल्सियस और आर्द्रता 70-85% बनाए रखना चाहिए। इसमें 10-15 दिन लगते हैं। जब बैग पूरी तरह से सफेद कवक जत्ल से ढक जाते हैं।

फसल: सफेद कवक जत्ल फैलाव 10-15 दिनों के बाद, बैगों को फसल कक्ष में स्थानांतरित करें और पॉलीथीन कवर हटा दें। खुले बैगों को लगभग 20 सेमी अलग रैक में रखा जाना चाहिए। रैक 60 सेमी चौड़ा होना चाहिए और दो रैक के बीच 50-60 सेमी का अंतर होना चाहिए। मशरूम 20-27 0° के तापमान में बढ़ते हैं। पिनहेड का तापमान थोड़ा कम (18-200°) है। रात के समय वेंटीलेशन को खुला छोड़ने से आमतौर पर तापमान में गिरावट आती है। कमरे के फर्श पर दिन में दो बार पानी का छिड़काव करने से सापेक्षिक आर्द्रता (80-85%) बनी रहती है। पहले 2-3 दिनों के लिए बैग पर छिड़काव से बचना चाहिए। छोटे पिन हेड दिखाई देते ही बैगों पर पानी की हल्की स्प्रे कर दी जाती है। एक बार जब पिनहेड 2-3 सेंटीमीटर बड़े हो जाते हैं तो बैगों पर थोड़ा पानी डालना पड़ता है और फलनकाय को बढ़ने देने के लिए आगे पानी देना बंद कर देना चाहिए। धुंध पैदा करने के लिए एक महीन नोजल से छिड़काव करना चाहिए। फलनकाय की शुरुआत के लिए कुछ प्रकाश आवश्यक है। स्पॉनिंग के 2 सप्ताह बाद पिंस दिखाई देने लगेंगे। पिनहेड अंततः सामान्य मशरूम में परिपक्व हो जायेंगे जो मुड़े हुए हैं और एक लोबेड रूप प्राप्त कर चुके हैं। दूसरी फसल 7-10 दिनों के बाद दिखाई देगी।

मशरूम की तुड़ाई: जब फलनकाय के किनारे अंदर की ओर मुड़ने लगें तो मशरूम को तोड़ लेना चाहिए। मशरूम को धीरे से घुमाकर, ताकि यह बिना किसी ठूंठ को छोड़े बाहर निकल जाए और आसपास के फलनकाय को भी परेशान न करें।

उपज: 0.9-1.0 किलोग्राम ताजे मशरूम प्रति किलोग्राम सूखे फसल अवशेषों से।

मशरूम का विपणन और मूल्य संवर्धन: मशरूम में मूल्य संवर्द्धन और मूल्य वर्धित उत्पाद तैयार करने की अपार संभावनायें हैं, जो कम शेल्फ-लाइफ की समस्या को हल करती हैं और मशरूम की कटाई के बाद के नुकसान में मदद करती हैं। मशरूम से, विभिन्न मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं और कुटीर उद्योगों को सफलतापूर्वक चलाने में मदद कर सकते हैं, जैसे मशरूम सूप, सूखे पाउडर, अचार, नगेटस, बिस्कुट, पापड़, खीर मिक्स, केक, नमकीन, संरक्षित, मशरूम समृद्ध प्रोटीन और पोषक तत्वों की खुराक आदि।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

कृषि पर्यटनः आय का नया स्त्रोत

प्रदीप कुमार[1], उपासना चौधरी[2], नीतू[3] एवं प्रमिला[4]

[1एवं 4]उद्यान विज्ञान विभाग, डॉ. राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर

[2एवं 3]उद्यान विज्ञान विभाग, बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बाँदा

पत्राचारकर्ता: prmtca@gmail.com

परिचय

कृषि पर्यटन, जिसे ग्रामीण पर्यटन के रूप में भी जाना जाता है, यात्रा उद्योग में एक बढ़ती हुई प्रवृत्ति है, जो कृषि गति विधियों और ग्रामीण अनुभवों को पर्यटन के साथ जोड़ती है। यह आगंतुकों को प्रकृति से जुड़ने, कृषि पद्धतियों के बारे में जानने और प्रामाणिक ग्रामीण जीवन शैली का अनुभव करने का अवसर प्रदान करता है। कृषि पर्यटन स्थल अक्सर फलों को चुनने, जानवरों को खिलाने और फार्म टूर जैसी गतिविधियों के अवसर प्रदान करते हैं। स्थायी कृषि और स्थानीय खाद्य उत्पादन में अंतदृर्ष्टि प्राप्त करने के लिए यात्री जैविक खेतों, दाख की बारियाँ या डेयरी संचालन का पता लगा सकते हैं। इसके अतिरिक्त, वेलोकनृत्य या मिट्टी के बर्तन बनाने जैसी पारंपरिक सांस्कृतिक गतिविधियों में खुद को डुबो सकते हैं, और ताजा, स्थानीय सामग्री से बने क्षेत्रीय व्यंजनों का आनंद साथ ही ले सकते हैं। कृषि पर्यटन सतत् विकास को बढ़ावा देता है, स्थानीय समुदायों का समर्थन भी करता है, और एक अद्वितीय व शैक्षिक यात्रा का अनुभव प्रदान करता है।

क. फार्म टूरः आगंतुक काम काजी खेतों का पता लगा सकते हैं, किसानों के साथ बातचीत कर सकते हैं और कृषि पद्धतियों के बारे में जान सकते हैं। उन्हें रोपण, कटाई या पशुओं की देखभाल जैसी गतिविधियों को देखने का मौका मिल सकता है।

ख. फार्म स्टेः पर्यटक खेतों पर रुक सकते हैं और ग्रामीण जीवन का अनुभव कर सकते हैं। उन्हें गायों का दूध निकालने, खेतों की जुताई करने या जानवरों को चराने जैसी गतिविधियों में शामिल होने का अवसर मिल सकता है।

ग. जैविक खेती के अनुभवः कृषि पर्यटन में अक्सर जैविक खेती से संबंधित गतिविधियाँ शामिल होती हैं, जहाँ आगंतुक टिकाऊ कृषि पद्धतियों, खाद बनाने और प्राकृतिक कीट नियंत्रण विधियों के बारे में सीख सकते हैं।

घ. फल और सब्जियाँ चुननाः आगंतुक अपने फल और सब्जियाँ खुद चुन सकते हैं, जिससे उन्हें कृषि उपज की ताजगी का अनुभव करने और फसलों की खेती में लगने वाले प्रयास को समझने की अनुमति मिलती है।

ङ. पारंपरिक शिल्प और कौशलः कृषि पर्यटन स्थल अक्सर पारंपरिक शिल्प और कौशल दिखाते हैं, जैसे मिट्टी के बर्तन बनाना, बुनाई या हस्तकला उत्पादन। आगंतुक इन कौशलों को स्थानीय कारीगरों से सीख सकते हैं।

च. पाक संबंधी अनुभवः कृषि पर्यटन आगंतुकों को स्थानीय रूप से तैयार सामग्री से तैयार पारंपरिक ग्रामीण व्यंजनों का आनंद लेने का अवसर प्रदान करता है। वे खाना पकाने की कार्यशालाओं में भाग ले सकते हैं और पारंपरिक व्यंजनों को सीख सकते हैं।

छ. सांस्कृतिक विसर्जनः आगंतुक स्थानीय समुदाय के साथ जुड़ सकते हैं, लोकनृत्यों, संगीत प्रदर्शनों और त्योहारों में भाग ले सकते हैं, ग्रामीण भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत में अंत दृर्ष्टि प्राप्त कर सकते हैं।

भारतीय किसानों के लिए कृषि पर्यटन का महत्व

कृषि पर्यटन, जिसे एग्री टूरिज्म के रूप में भी जाना जाता है, पर्यटकों को एक प्रामाणिक ग्रामीण अनुभव प्रदान करने और कृषि गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए व कृषि क्षेत्रों और खेतों में पर्यटकों को आकर्षित करने के अभ्यास को संदर्भित करता है। कृषि पर्यटन कई कारणों से भारतीय किसानों के विकास और स्थिरता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है-

- आय का विविधीकरण
- ग्रामीण विकास
- पारंपरिक ज्ञान और संस्कृति का संरक्षण
- शिक्षा और जागरूकता

- बाजार के अवसर
- पर्यटन को बढ़ावा देना

कृषि पर्यटन के घटक

विशिष्ट स्थान और प्रसाद के आधार पर कृषि पर्यटन के घटक भिन्न हो सकते हैं, लेकिन यहाँ कुछ सामान्य तत्व हैं।

- खेतों का दौरा
- फार्म स्टे
- फार्म टूर और गाइडेड वॉक
- कृषि गतिविधियाँ
- किसानों का बाजार
- खाद्य और शराब के अनुभव
- शैक्षिक कार्य शालायें
- सांस्कृतिक विसर्जन
- प्रकृति और बाहरी गतिविधियाँ
- स्थिरता और संरक्षण

भारत में कृषि पर्यटन को लागू करने के लिए आवश्यक उपाय

अ. प्रतिबंधित गतिविधियों को रोकने एवं नियंत्रित करने के लिए कृषि पर्यटन के संबंध में समितियों द्वारा दिशा-निर्देश तैयार किए जायें। राज्य सरकारें सुनिश्चित करती हैं कि ये समितियाँ ग्राहकों की सुरक्षा के लिए काम करें।

ब. सरकार कृषि पर्यटन के तहत कौशल विकास प्रशिक्षण और लाइसेंस प्रदान करे ताकि कर लाभ सहित वित्त सुविधा प्राप्त करने में आसानी हो।

स. जमीनी स्तर के प्रशासन और ग्राम पंचायतें स्थानीय लोगों के बेहतर समन्वय से ग्राम स्तर पर कृषि पर्यटन को विकसित करने में सहायक हो सकती हैं।

य. बेहतर पहुँच और प्रचार के लिए एग्रो टूरिज्म फार्मों को राज्य के पर्यटन विभागों के समन्वय से स्थानीय त्योहारों और मौसमी प्रदर्शनियों का आयोजन करना चाहिए।

र. ग्रामीण युवाओं को उचित प्रशिक्षण प्रदान किया जा सकता है और डिप्लोमा और सर्टिफिकेट कोर्स की पेशकश की जा सकती है, जो कृषि-आधारित स्टार्टअप और रोजगार के अवसर शुरू करने में मददगार है।

व. कार्यशालाओं की मदद से प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए पेशेवरों को शामिल कर के ग्राहकों को बेहतर आतिथ्य सेवायें और अनुभव प्रदान किया जा सकता है।

कृषि पर्यटन स्थल के चयन के लिए सावधानियाँ

एग्रो टूरिज्म के लिए एकसाइट का चयन करते समय, इसकी सफलता और स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए कई सावधानियों पर विचार करना महत्वपूर्ण है। यहां कुछ प्रमुख सावधानियों को ध्यान में रखा गया है

- पहुँच योग्यता
- इंफ्रास्ट्रक्चर
- कृषि क्षमता
- पर्यावरण संबंधी विचार
- स्थानीय समुदाय का समर्थन
- बचाव और सुरक्षा
- बाजार की माँग और क्षमता
- विनियामक अनुपालन
- अवसं रचना विकास
- मार्केटिंग और प्रमोशन

कृषि पर्यटन के लाभ

हालांकि, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि एग्रो टूरिज्म में संलग्न होने के लिए सावधानी पूर्वक योजना, निवेश व खेती और पर्यटन दोनों पहलुओं को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने की क्षमता की आवश्यकता होती है। कृषि पर्यटन उद्यम शुरू करने से पहले किसानों को अपने परिचालन पर संभावित प्रभावों पर विचार करना चाहिए, जैसे कार्यभार में वृद्धि, बुनियादी ढांचे का विकास और सुरक्षा और स्वच्छता नियमों का अनुपालन। एक किसान के दृष्टिकोण से, कृषि पर्यटन कई लाभ प्रदान करता है-

- आय का विविधीकरण
- लाभ प्रदता में वृद्धि
- मार्केटिंग और ब्रांडिंग के अवसर
- शिक्षा और जागरूकता
- ग्रामीण विकास और सामुदायिक सहायता
- कृषि विरासत का संरक्षण

ISSN No. 2583-3316

भारत में कृषि पर्यटन का भविष्य और दायरा

हालांकि, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि भारत में कृषि पर्यटन की सफलता उचित बुनियादी ढाँचे के विकास, प्रभावी विपणन रणनीतियों, सामुदायिक भागीदारी और कृषि प्रथाओं की स्थिरता सुनिश्चित करने पर निर्भर करती है। भारत में कृषि पर्यटन की पूरी क्षमता का दोहन करने के लिए सरकार, स्थानीय समुदायों और पर्यटन उद्योग के बीच सहयोग महत्वपूर्ण है। यहाँ कुछ कारक हैं, जो भारत में कृषि पर्यटन के भविष्य और दायरे में योगदान करते हैं

- समृद्ध कृषि विरासत
- ग्रामीण विकास और अधिकारिता
- सतत और जिम्मेदार पर्यटन
- अनुभव जन्य और शैक्षिक पर्यटन
- घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय पर्यटकों की माँग
- सरकारी पहल और समर्थन
- पर्यटन प्रस्तावों का विविधीकरण

निष्कर्ष

सबसे पहले, कृषि पर्यटन ग्रामीण क्षेत्रों में सतत विकास के लिए एक मंच प्रदान करता है। किसानों के आय स्रोतों में विविधता लाकर, यह कृषि समुदायों पर आर्थिक दबाव को कम करने में मदद करता है। पर्यटन गतिविधियों से उत्पन्न अतिरिक्त राजस्व को बुनियादी ढाँचे, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा में पुनः निवेश किया जा सकता है, इस प्रकार इन क्षेत्रों में जीवन की समग्र गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है।

इसके अलावा, कृषि पर्यटन सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ाता है और स्थानीय विरासत को संरक्षित करता है। पर्यटकों को पारंपरिक कृषि पद्धतियों, पाकपरंपराओं और लोक कलाओं में खुद को डुबोने का अवसर मिलता है। ज्ञान और अनुभवों का यह आदान-प्रदान सांस्कृतिक समझ को बढ़ावा देता है और स्वदेशी प्रथाओं को संरक्षित करने में मदद करता है, जो अन्य थालुप्त हो सकती हैं। यह स्थानीय समुदायों के बीच गर्व और पहचान की भावना पैदा करता है, उनके आत्मविश्वास और आत्मसम्मान को बढ़ाता है।

अंत में, कृषि पर्यटन, पर्यटन उद्योग का एक मूल्यवान और बढ़ता हुआ खंड है। ग्रामीण अर्थव्यवस्थाओं, पर्यावरणीय स्थिरता, सांस्कृतिक संरक्षण और आगंतुक शिक्षा पर इसके सकारात्मक प्रभाव को कम कर के नहीं आंका जा सकता है। सीखने के साथ अवकाश को जोड़कर, कृषि समुदायों के विकास और संरक्षण का समर्थन करते हुए कृषि पर्यटन पर्यटकों के लिए एक अनूठा और समृद्ध अनुभव प्रदान करता है। जैसे-जैसे स्थायी और प्रामाणिक यात्रा अनुभवों की माँग बढ़ती जा रही है, कृषि-पर्यटन पर्यटन के भविष्य को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए तैयार है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

अनार उत्पादन तकनीक

एन. आर. रंगारे[1*], एस. के. पाण्डे[2], अनय रावत[3] एवं टी. आर. शर्मा[4]

[1,2] एवं [4]उद्यान विज्ञान विभाग, [3]शस्य विज्ञान विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर

पत्राचारकर्ता: nrrangare@gmail.com

परिचय

अनार एक झाड़ीनुमा पौधा है, जिसका वानस्पतिक नाम *पुनिका ग्रेनेटम* तथा कुल पुनकेशी है। इसका फल बलास्ट है, जो बेरी का एक प्रकार है। फल का खाया जाने वाला भाग ''एरिल'' (बीज चोल-यानि बीज के ऊपरी चढ़ी परत) है। औषधीय गुण और पौष्टिकता के कारण यह अत्यंत महत्वपूर्ण फल है। इसमें फाइबर, विटामिन के,सी, और बी, आयरन, पोटेशियम, जिंक और ओमेगा-6 फैटी एसिड जैसे पोषक तत्व पाए जाते हैं, जो हमारे शरीर को स्वस्थ रखने में बेहद कारगर होते हैं। यह न सिर्फ शरीर के लिए, बल्कि बाँलों और त्वचा के लिए भी बेहद फ़ायदेमंद है। इसके नियमित सेवन से हमारे शरीर में खून की कमी को पूरा किया जा सकता है, जिससे शरीर की कमज़ोरी दूर होती है। इसकी पंखुड़ियाँ रंग तैयार करने के लिए उपयोग की जाती हैं। महाराष्ट्र, अनार का मुख्य उत्पादक राज्य है। दूसरे राज्य जैसे राजस्थान, कर्नाटका, गुजरात, तामिलनाडू, आंध्रा प्रदेश, उत्तर प्रदेश,मध्या प्रदेश, पंजाब और हरियाणा, अनार की खेती छोटे स्तर पर करते हैं। अनार सबसे पसंदीदा फलों में से एक है। ताजे फलों का उपयोग, जूस, सिरप, स्कैश, जेली, अनार दाना, टैबलेट, एसिड आदि जैसे प्रसंकृत उत्पाद भी तैयार किये जाते हैं। भारत में अनार का क्षेत्रफल 113.2 हजार हेक्टेयर, उत्पादन 745 हजार मेट्रिक टन एवं उत्पादकता 6.60 मेट्रिक टन प्रति हेक्टेयर है। (2012-13)

अनार के पोषक तत्व

अनार का रस स्वादिष्ट तथा औषधीय गुणों से भरपूर होता है। अनार में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फाइबर, विटामिन और खनिज पाए जाते हैं। 100 ग्राम अनार दाने खाने पर हमारे शरीर को लगभग 65 किलो कैलोरी ऊर्जा मिलती है। अनार के बीज और छिलको का इस्तेमाल कई आयुर्वेदिक दवा बनाने में भी किया जाता है। इसके बीजों से निकले तेल का प्रयोग औद्योगिक क्षेत्र में किया जाता है। इस पर किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि अनार रक्तसंचार वाली बीमारियों से लड़ता है, उच्च रक्तचाप को घटाता है, सूजन और जलन में राहत पहुँचाता है, गठिया और वात रोग की संभावना घटाता और जोड़ों में दर्द कम करता है, कैंसर की रोकथाम में सहायक बनता है, शरीर के बुढ़ाने की गति धीमी करता है और महिलाओं में मातृत्व की संभावना और पुरुषों में पुंसत्व बढ़ाता है। अनार को त्वचा के कैंसर, स्तन-कैंसर, प्रोस्टेट ग्रंथि के कैंसर और पेट में अल्सर की संभावना घटाने की दृष्टि से भी विशेष उपयोगी पाया गया है।

जलवायु व भूमि

अनार उपोष्ण जलवायु का पौधा है। यह अर्द्ध शुष्क जलवायु में अच्छी तरह उगाया जा सकता है। फलों के विकास

एवं पकने के समय गर्म एवं शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है। लम्बे समय तक उच्च तापमान रहने से फलों में मिठास बढ़ती है। अनार की खेती के लिये कछारी या बलुई दोमट मृदा सर्वोत्तम होती है। यह पौधा कुछ हद तक क्षारीयता भी सहन कर लेता है। बगीचे की मृदा व्यवस्था, सिंचाई, पोषण आदि का विशेष ध्यान दिया जाता है। सभी प्रकार की मृदा में जल निकास अच्छा होना आवश्यक है। मृदा की गहराई 1.5 से 2.0 मीटर होनी चाहिये।

गर्मी के मौसम या अन्य समय में लगभग 50 x 50 x 50 से.मी. नाप के गड्ढे, सिफारिश की गई दूरी पर बनायें। इन गड्ढों को गर्मी में खुला छोड़ दें। अन्य मौसम में आसपास की घास एवं कचरा गड्ढे में डाल कर जला दें तथा 20-25 किलो गोबर

की खाद, 1 किलों नीम/अरण्डी/करंज की खली, आधा किलों सिंगल सुपर फास्फेट, 250 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश तथा 50 ग्राम कार्बोरिल चूर्ण प्रति गड्ढे में डाल कर जमीन से 10-15 से.मी. ऊँचाई तक भरें और गड्ढा बैठ जाने पर पौधा लगायें।

अनार की प्रमुख किस्में

मृदुला: यह किस्म गणेश एवं गुल-ए-शाहू किस्म के संकरण की एफ-1 संतति से चयन के द्वारा महात्मा फुले कृषि विद्यापीठ, राहुरी, महाराष्ट्र से विकसित की गई है। फल मध्यम आकार के चिकनी सतह वाले गहरे लाल रंग के होते हैं। एरिल गहरे लाल रंग की बीज मुलायम, रसदार एवं मीठे होते हैं। इस किस्म के फलों का औसत वजन 250-300 ग्राम होता है।

भगवा

- इस किस्म के फल बड़े आकार के भगवा रंग के चिकने चमकदार होते हैं।
- एरिल आकर्षक लाल रंग की एवं बीज मुलायम होते हैं।
- उच्च प्रबंधन करने पर प्रति पौधा 30.38 कि.ग्रा. उपज प्राप्त की जा सकती है।

गणेश

- यह किस्म डॉ. जी.एस.चीमा द्वारा गणेश रिवण्ड फल अनुसंधान केन्द्र, पूना से 1936 में आलंदी किस्म के वरण से विकसित की।
- इस किस्म के फल मध्यम आकार के बीज कोमल तथा गुलाबी रंग के होते हैं।
- यह महाराष्ट्र की मशहूर किस्म है।

ज्योति

- यह किस्म बेसिन एवं ढ़ोलका के संकरण की संतति से चयन के द्वारा विकसित की गई हैं।
- फल मध्यम से बड़े आकार के चिकनी सतह एवं पीलापन लिए हुए लाल रंग के होते हैं।
- एरिल गुलाबी रंग की बीज मुलायम बहुत मीठे होते हैं।
- प्रति पौधा 8-10 कि.ग्रा. उपज प्राप्त की जा सकती है।

अरक्ता

- यह किस्म महात्मा फुले कृषि विद्यापीठ, राहुरी, महाराष्ट्र से विकसित की गई है।
- यह एक अधिक उपज देने वाली किस्म है।
- फल बड़े आकार के, मीठे, मुलायम बीजों वाले होते हैं। एरिल लाल रंग की एवं छिल्का आकर्षक लाल रंग का होता है।
- उच्च प्रबंधन करने पर प्रति पौधा 25-30 कि.ग्रा. उपज प्राप्त की जा सकती है

प्रवर्धन

अनार का प्रवर्धन बीज व वानस्पतिक प्रसारण द्वारा किया जाता है। बीज द्वारा उगाये गये पौधे में फल देर से आते हैं तथा सामान्यतः फलों की गुणवत्ता में बदलाव आ जाता है। इसलिये इसे वानस्पतिक विधि जैसे कटिंग व गूँटी द्वारा तैयार किया जाता है।

कटिंग द्वारा

एक वर्ष पुरानी शाखा की 20-30 से.मी. लम्बी कलमें लगभग पेंसिल की मोटाई हो, का चुनाव करें। कलम के आधे भाग को गाँठ के ठीक नीचे से सीधा तथा ऊपरी भाग को तिरछा काटें। पत्तियाँ या पतली शाखायें निकाल दें। इस कलम को इस प्रकार गाड़ें ताकि 2/3 भाग जमीन के अंदर तथा शेष 1/3 भाग ऊपर रहे। कलम लगाने से पूर्व इसे न्डोल ब्यूटारिक अम्ल (आई.बी.ए.) से कलमों को उपचारित करने से जडें शीघ्र एवं अधिक संख्या में निकलती हैं।

गूँटी

अनार में गूँटी लगाने का सही समय जुलाई-अगस्त है। एक वर्ष पुरानी शाखा जो, पेंसिल की मोटाई की हो, लगभग 25-30 से.मी. पर एक से.मी. चौड़ाई की छाल निकालें और इस जगह पर स्फेगनम मास चारों और लगाकर पॉलीथान शीट से ढ़ककर सुतली से बाँध दें। इसके 25-35 दिन बाद जब जड़े दिखाई देने लगें तो स समय शाखा को स्केटियर से काटकर क्यारी या गमलो में लगाकर हलकी सिचाई करें।

रोपण

अनार के पौधे लगाने का सर्वोत्तम समय जुलाई से सितम्बर है तथा पौधों की दूरी मृदा के प्रकार एवं जलवायु पर निर्भर करती है। सामान्यतः इसे 5 x 3 मी. एवं 5 x 5 मीटर पर लगाया जाता है किन्तु सघन रोपण 5x 2 मीटर दूरी पर करने से 2 x 2.5 गुना अधिक उपज ली जा सकती है। पौध रोपण के एक महीने पहले से ही 60 x 60 x 60 सेमी. आकार के गड्ढे खोद कर 15 से 30 दिनों के लिए खुला छोड दें। तत्पश्चात गड्ढे की ऊपरी मिट्टी में 20 किग्रा. पकी हुई गोबर की खाद 1 किग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट 50 ग्राम क्लोरो पायरीफास चूर्ण मिट्टी में मिलाकर गड्ढों को सतह से 15 सेमी. ऊँचाई तक भर दे। गड्ढे भरने के बाद सिचाई करें, जिससे मिट्टी भली भांति जम जाए उसके बाद ही पौधों का रोपण कर सिंचाई करें।

ISSN No. 2583-3316

खाद एवं उर्वरक

उर्वरक एवं सूक्ष्म पोषक तत्व निर्धारित करने के लिये मृदा परीक्षण आवश्यक होता है। सामान्य मृदा में 10 किलोग्राम सड़ी गोबर की खाद, 250 ग्राम नाइट्रोजन, 125 ग्राम फॉस्फोरस एवं 125 ग्राम पोटैशियम प्रतिवर्ष प्रति पेड़ चाहिए। साथ ही प्रति वर्ष इसकी मात्रा इस कदर बढ़ानी चाहिए की 5 वर्ष पश्चात् प्रति पौधा क्रमशः 625 नाइट्रोजन, 250 ग्राम फॉस्फोरस तथा 250 ग्राम पोटाशियम प्राप्त हो सके। शुरू के 3 वर्ष तक जब पौधों में फल नहीं आ रहे हो उर्वरकों को तीन बार में जनवरी, जून तथा सितंबर में देना चाहिए तथा चौथे वर्षा में जब फल आने लगे तो मौसम (बाहर) के अनुसार दो बार में देना चाहिये। शुष्क क्षेत्रों में मृग बाहर लेने की सांस्तुति कि जाती हैं, अतः गोबर की खाद व फॉस्फोरस पूरी मात्रा तथा नाइट्रोजन व पोटाश की आधी मात्रा जुलाई में तथा शेष आधी मात्रा अक्टूबर में पौधों के चारो तरफ एक से डेढ़ मीटर की परिधि में 15-20 से. मी. गहराई में डालकर मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिये। अनार की खेती में सूक्ष्म तत्वों का बहुत महत्व है। इसके लिए जिंक सल्फेट 6 ग्राम प्रति लीटर, फेरस सल्फेट 4 ग्राम प्रति लीटर, तथा बोरेक्स 4 ग्राम प्रति लीटर का छिड़काव फूल आने तथा फल बनने के समय करना चाहिए।

अंतरवर्तीय फसलें

शुरूआती दो से तीन वर्षों में अंतरफसली संभव है। अंतरफसली के तौर पर सब्जियों, फलीदार फसलें या हरी खाद वाली फसलें उगाई जा सकती हैं।

सिंचाई

अनार एक सूखा सहनशील फसल हैं। मृग बहार की फसल लेने के लिए सिंचाई मई के महीने से शुरू करके मानसून आने तक नियमित रूप से करना चाहिए। वर्षा ऋतु के बाद फलों के अच्छे विकास के लिए नियमित सिंचाई 10-12 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए। टपक सिंचाई विधि (ड्रिप इरीगेशन) द्वारा की गई सिंचाई से पौधों को उचित मात्रा में पानी प्राप्त हो जाता हैं, जिससे पौधा अच्छे से वृद्धि करता है। इसमें 40 प्रतिशत पानी की बचत और 30-35 प्रतिशत उपज में वृद्धि पाई गई है।

सघाई एवं छँटाई

अनार एक झाड़ीनुमा पौधा होता है। पौधे को अच्छा आकार देने के लिये सघाई एवं छँटाई आवश्यक है। अनार में दो तरह से छँटाई की जा सकती है।

बहु तना पद्धतिः इस पद्धति में अनार को इस प्रकार साधा जाता है कि इसमें तीन से चार तने छूटे हों, बाकी टहनियों को काट दिया जाता है। इस तरह साधे हुए तनें में प्रकाश अच्छी तरह से पहुँचता है, जिससे फूल व फल अच्छी तरह आते हैं। यह विधि ज्यादा उपयुक्त है।

एक तना पद्धतिः इस पद्धति में एक तने को छोड़कर बाकी सभी बाहरी टहनियों को काट दिया जाता है। इस पद्धति में जमीन की सतह से अधिक सकर निकलते हैं, जिससे पौधा झाड़ीनुमा हो जाता है। इस विधि में तना छेदक का अधिक प्रकोप होता है। यह पद्धति व्यावसायिक उत्पादन के लिए उपयुक्त नही हैं।

अनार में बहार नियंत्रण

अनार के पौधे में साल भर मे तीन बार -जनवरी-फरवरी (अम्बे बहार), जून-जुलाई (मृग बहार) एवं सितम्बर-अक्टूबर (हस्त बहार) में फूल आते हैं। ज्यादा उत्पादन तथा व्यवसाय के रूप से केवल एक बार की फसल ली जाती है। और यह पानी की उपलब्धता एवं बाजार की माँग के अनुसार तय किया जाता है। जहाँ सिंचाई की सुविधा नहीं होती है, उन छेत्रो में मृग बहार से फल लिये जाते हैं तथा जहाँ सिचाई की सुविधा होती है उन क्षेत्रों में अम्बें बहार से फल लिए जाते हैं। बहार नियंत्रण के लिए जिस बहार से फल लेने हो उसके फूल आने से दो माह पूर्व सिंचाई बन्द कर दी जाती है।

पौध संरक्षण

फल धब्बा

- इस किस्म का रोग अनार के फलो पर आक्रमण करता है।
- यह रोग अनार के फलो पर सरकोस्पोरा एसपी. नामक फफूँद के रूप में आक्रमण करता है।
- इस रोग से प्रभावित अनार के फलो पर छोटे-छोटे काले रंग के धब्बे दिखाई देने लगते है।
- रोग का प्रकोप अधिक बढ़ने पर धब्बो का आकार भी बढ़ने लगता है।

रोकथाम

- इस रोग से बचाव के लिए अनार के पौधों पर हेक्साकोनाजोल, मैन्कोजेब या क्लोरोथॅलोनील की उचित मात्रा का छिड़काव किया जाता है।

फल गलन रोग

- यह रोग क्लेडोस्पोरियम कवक के कारण होता है।

- यह रोग फल तोड़ने के बाद लगता है। फल पर लाल या हल्के भूरे रंग के धब्बे आते हैं और बाद में पूरा फल सड़ जाता है।

रोकथाम

- फल गलन को रोकने के लिए स्ट्रैप्टोसाइकलिन 50 ग्राम / कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 400 ग्राम को 150 लीटर पानी में डालकर स्प्रे करें। पहली स्प्रे के 15 दिनों के बाद दूसरी स्प्रे करें।

माहूँ

- इस किस्म का रोग पौधों पर आक्रमण कर उन्हें हानि पहुँचाता है।
- यह कीट रोग पौधों के नाजुक अंगो पर आक्रमण कर उनका रस चूस लेता है।
- इस रोग से प्रभावित पौधों की पत्तियों का रंग काला पड़ जाता है, तथा कुछ समय पश्चात् ही पत्ती पूरी तरह से नष्ट होकर गिर जाती है।
- इसके साथ की पौधा विकास करना बंद कर देता है।

रोकथाम

- अनार के पौधों को इस रोग से बचाने के लिए प्रोफेनोफॉस या डायमिथोएट की उचित मात्रा का छिड़काव किया जाता है।
- इसके अतिरिक्त यदि रोग का प्रकोप अधिक बढ़ जाता है, तो इमिडाक्लोप्रिड की उचित मात्रा का छिड़काव पौधों पर करें।

अनार की तितली

- इस किस्म का रोग पैदावार को अधिक प्रभावित करता है, इस रोग से प्रभावित फसल से 30% तक पैदावार कम प्राप्त होती है।
- यह कीट रोग फलो पर अपना लार्वा छोड़ कर उन्हें हानि पहुँचाता है।
- इस रोग के लग जाने से फल कम समय में ही पूरी तरह से नष्ट हो जाता है।

रोकथाम

- इस रोग से बचाव के लिए अनार के पौधों पर इन्डोक्साकार्ब, स्पाइनोसेडकी या ट्रायजोफास की उचित मात्रा का छिड़काव करना होता है।

पत्ती एवं फल धब्बा रोग

- यह फफूँद जनित रोग है।
- पत्तियाँ एवं फलों में भूरे धब्बे बन जाते हैं।

रोकथाम

- इस रोग से बचाओ हेतु मैनकोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2.5 ग्राम को प्रति लीटर पानी में डालकर स्प्रे करें।

फल फटने की समस्या

अनार के फल कई कारण से फट जाते है, जिसमें सूक्ष्म तत्वों जैसे बोरॉन और कैल्शियम की कमी होना, पौधों में अचानक पानी दे देना, जमीन के तापमान में अचानक परिवर्तन आ जाना, फल की परिपक्व अवस्था में गर्म हवा का चलना आदि कई कारण से फलों में फटने की समस्या हो जाती है।

इस तरह की समस्या के बचाओ हेतु प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें, अनार के पौधों में लम्बे समय बाद अचानक और अधिक तापमान में सिंचाई न करें, उर्वरकों का छिड़काव करें व बोरान 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से 15 दिन के अंतराल पर दो छिड़काव करने से फल फटने की समस्या को नियंत्रित किया जा सकता है।

फसल कटाई

फूल निकलने के बाद से 5-6 महीनों में फल पक कर तैयार हो जाते हैं। जब फल हरे से हल्के पीले या लाल रंग का हो जाये, या फल पकना शुरू हो जाये तो यह कटाई के लिए सही समय माना जाता है। कटाई करने में देरी करने से फलों में दरारें आ जाती हैं, जिससे उपज में कमी आती है।

निष्कर्ष

अनार एक स्वादिष्ट तथा औषधीय गुणों से भरपूर फल है, जो की उपोष्ण व अर्द्ध शुष्क जलवायु में अच्छी तरह उगाया जा सकता है, अनार की अच्छी उपज के लिए अच्छी किस्म के साथ बगीचे का रख रखाव में ध्यान देना अत्यंत आवश्यक है। अनार के बगीचे में शुरुआत से ही अंतरफसल द्वारा मुनाफा लिया जा सकता है। अतः अनार का बगीचा किसान भाइयो के लिए एक अच्छी मुनाफे की खेती साबित हो सकती है।

संदर्भ

- hhttps://mpkrishi.mp.gov.in/hindisite_New/Anar_New.aspx
- एस.के.त्यागी,डॉ.एम.एल.शर्मा एवं वाई.के.जैन, राजमाता विजया राजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय,कृषि विज्ञान केंद्र खरगोन

❖❖

ISSN No. 2583-3316

शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र में करें बेल की खेती

आनंद साहिल[1*] , उपासना चौधरी[2] एवं नितिन मुकेश[3]

[1]युवा पेशेवर-1 के. शु. बा. सं., बीकानेर

[2]बागवानी विभाग, बाँदा एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बाँदा

[3]बागवानी विभाग, बुंदेलखण्ड यूनिवर्सिटी, झाँसी

पत्राचारकर्ता: anandmaharana19981998@gmail.com

परिचय

बेल भारत के प्राचीन फलों से एक है, जिसका वैज्ञानिक नाम *एग्लि मारमेलोस* है और यह किम्यरटेसिए कुल के अंतर्गत आता है। यह भारतवर्ष का प्राचीन एवं देशज पौध औषधीय गुणो से भरपूर माना जाता है। हमारे देश में बेल फल धार्मिक रूप से भी महत्वपूर्ण है। प्राचीन कालीन वैदिक साहित्य मे यह 'दिव्य वृक्ष' के नाम से प्रचलित है। इसके औषधीय गुणों के कारण यह 'रोगान बिलति भिनन्ति इति बिल्व' अर्थात जो रोगों का नाश करता हो वह बेल कहलता है। इसके औषधीय गुणों का वर्णन इतिहास के विभिन्न ग्रंथो जैसे यजुर्वेद, जैन साहित्य, उपवन विनोद, चरकसंहिता और बृहत संहिता में विस्तार से प्रकाशित किया गया है। प्राचीनकाल से इसे 'श्रीफल' के नाम से भी जानते है साथ ही इसकी पत्तियों एवं कलमों का प्रयोग धार्मिक रूप मे भी करते हैं। समान्यतः बेल के जड़, छाल, पत्तों, शाख एवं फलों मे महत्वपूर्ण औषधीय गुण होने के कारण मानव इसका प्रयोग विभिन्न रोगों से मुक्ति पाने हेतु औषधि के रूप मे प्रयोग करते है। बेल के फलों का प्रयोग करने से हृदय से संबन्धित बीमारियों से मुक्ति एवं दिमाग को ताजा रखने मे किया जाता है। बेल के फलों का प्रयोग करने से पेट से संबन्धित विभिन्न बीमारियों के साथ-साथ मधु मेह, रक्तचाप तथा अन्य बीमारियों से भी राहत मिलती है। विषम परिस्थितियों मे ज्यादातर पौधे वृद्धि नहीं करते किन्तु बेल के पौधे मुख्य रूप से अपनी विशेषताओ जैसे जल जमा व एवं सूखे वातावरण के प्रति सहनशीलता, विभिन्न प्रकार की बंजर भूमि हेतु उपयुक्तता, ठंड के तापमान के साथ-साथ उच्च तापमान 46 डिग्री सेल्सियस तक सहनशीलता, प्रति इकाई अधिक उत्पादन एवं उत्पादकता, विभिन्न प्रकार की परिरक्षित पदार्थ बनाने हेतु उपयुक्तता और अधिक समय तक भंडारण क्षमता होने के कारण 21 वी सदी के प्रमुख फल के रूप मे माना जा रहा है। सामान्यतः इस फल को हम गर्मियों के मौसम में शरबत के रूप में ज्यादा प्रयोग करते हैं। इसकी लोकप्रियता को देखते हुए और इसकी ठण्डी तासीर होने के कारण, इसका उत्पादन व्यावसायिक तौर पर भी किया जाने लगा है। इसकी प्रतिवर्ष अच्छी वृद्धि, विकास, फलन एवं प्रति इकाई क्षेत्र के उत्पादन हेतु ज्ञात होता है कि इसकी बागवानी शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में की जा सकती है।

भूमि

समान्यतः बेल की खेती किसी भी प्रकार की भूमि में की जा सकती है परन्तु उपयुक्त जल निकास वाली बलुई दोमट मिट्टी इसकी खेती हेतु सर्वोत्तम मानी जाती है। इसकी खेती बंजरीली, ऊसर भूमि मे भी आसानी से की जा सकती है। समान्य तौर पर बेल की खेती के लिए मृदा का 6-8 पी.एच. मान सर्वोत्तम माना जाता है। क्षारीय क्षेत्रों मे समान्य तौर पर जिप्सम का प्रयोग करके भी इसकी खेती की जा सकती है।

जलवायु

बेल मुख्यतः उपोष्ण जलवायु का पौध है परन्तु इसकी खेती उष्ण, शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों वाले जलवायु में भी सफलता पूर्वक किया जा सकता है। इसकी बागवानी हेतु समुंद्र तल से 1200 मीटर ऊँचाई और 7 से 46 डिग्री सेल्सियस तापमान में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। गर्मी के समय (अप्रैल-मई) माह में इसकी पत्तियाँ गिर जाती है तथा पेड़ों मे गोंद होने के कारण पौधों में शुष्क जलवायु को सहन करने की क्षमता बढ़ जाती है। इसकी खेती हेतु अधिक पाले, अधिक वर्षा और जहाँ पानी का ठहराव होता हो उपयुक्त नहीं है।

प्रवर्धन

बेल के पौधे मुख्यतः बीजों से तैयार किए जाते है। बीजों की बुवाई फलों से निकालने के तुरंत बाद 15-20 से.मी. की उँचाई, 1 मी. चौड़ाई एवं 10 मी. लंबी क्यारियाँ (नर्सरी बेड) में 1-2 से.मी. की गहराई पर की जाती है। बुवाई का उपयुक्त

ISSN No. 2583-3316

समय मई-जून माह को माना जाता है। व्यावसायिक स्तर पर बेल की खेती करने हेतु चश्मा (पैच) विधि से पौधे तैयार करना चाहिए। पैगबन्दी चश्मा विधि से पौधे समान्यतः मई-जून माह मे 80-90 प्रतिशत तक तैयार किया जा सकता है। इस प्रकार कलिका को 1-2 माह पुरानी शाख से लेना उपयुक्त माना जाता है। पुराने मूलवृंत पौधों पर ध्रुवता को ध्यान मे रखते हुए कलिका चढ़ाना चाहिए। समान्यतः पॉली एवं नेट हाउस की सहायता से बेल के पौधें का प्रवर्धन साल के अन्य महीनों मे भी आसानी से किया जा सकता है। इस प्रकार से तैयार पौधे को समान्यतः पॉली हाउस मे 28-30 डिग्री सेल्सियस तापमान एवं 70-75 प्रतिशत आपेक्षित आद्रता एवं 30 मिनट के अंतराल पर पानी का फुहारा चलाते रहना चाहिए। मई-जून माह मे एक वर्ष पुराने मूलवृन्त पर 6-7 माह पुरानी बीमारी रहित शाख के ऊपर सॉफ्ट-वूड ग्राफ्टिंग करने से 80 प्रतिशत से अधिक पौधे तैयार किये जा सकते है।

किस्में

बेल की अधिक उत्पादन के लिए अच्छी किस्मों का चयन अत्यंत आवश्यक है। इस प्रकार बेल की उन्नत किस्में जैसे-सी.आई.एस.एच.बी-1, सी.आई.एस.एच.बी-2, नरेन्द्र बेल 7, नरेन्द्र बेल 9, नरेन्द्र बेल 16, नरेन्द्र बेल 17, पंतसिवानी, पंत अपर्णा, थारदिव्या इत्यादि है।

सा.आई.एस.एच.बी-1: इस किस्म के पौधे मध्यम ऊँचाई एवं कम फैलाव के होते है। फल, समान्तः अप्रैल-मई माह में पकने शुरू हो जाते है एवं आकार मे अंडाकार गोल, लंबाई 15-17 से.मी., गोलाई 38-40 से.मी. एवं मिठास (38.0 डिग्री ब्रीक्स) तक होती है। फलों का औसत वजन लगभग 1 किग्रा माना जाता है। फलों मे रेशे कम एवं बीजों की मात्रा अधिक होती है। लगभग 10-12 साल के पुराने पौधे से प्रतिवर्ष 50-80 किग्रा तक फल प्राप्त किये जा सकते है।

सी. आइ. एस. एच. बी-2: इस किस्म के पौधे कम ऊँचाई वाले एवं अधिक फैलाव करते है। इस प्रकार प्राप्त फलों का आकार अंडाकार एवं इसका औसत वजन लगभग 1.80-2.70 किग्रा होता है। इसका गुद्दा नारंगी-पीला एवं स्वादिष्ट होता है। इसमे फाइबर एवं बीजों की मात्रा कम होती है। इस प्रकार 10-12 साल पुराने पौधे से 60-90 किग्रा प्रति पौध फल प्राप्त किये जा सकते है।

पंत अपर्णा: इस किस्म के पौधे मुख्यतः घने एवं मध्यम ऊँचाई के होते है व इनकी शाखायें नीचे लटकती हुई रहती है। पत्तियाँ बड़ी, गहरे रंग की एवं पेड़ों पर काँटे भी कम पाये जाते है। इस प्रकार प्राप्त फल का औसत वजन 1.0 किग्रा होता है। फल गोलाकार, पतले छिलके वाले होते है। इस किस्म में फल जल्दी लगते एवं उत्पादन भी अच्छा होता है।

पंत शिवानी: इस किस्म के पौधे मुख्यतः ऊपर की तरफ बढ़ने वाले एवं घने होते है। फलों का औसत वजन 2-2.5 किग्रा प्रति फल होता है। इस किस्म के पौधें पर काँटे भी बढ़त कम होते है एवं 10-12 वर्ष पुराना पौध 85-90 किग्रा प्रति पौध फल देता है।

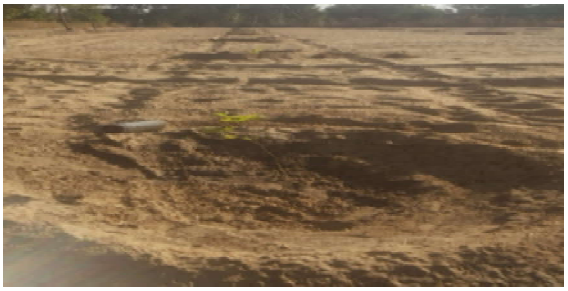

सूखी घास द्वारा लवार

गड्ढे की तैयारी एवं पौध रोपण

बेल का बगीचा लगाने से पूर्व भूमि का चयन कर पौधे लगाने के स्थान को रेखांकित किया जाता है। बेल के पौध रोपण हेतु गड्ढे से गड्ढे के बीच की दूरी मुख्यतः पौधे की किस्मों एवं मृदा की उर्वरता पर निर्भर करती है। समान्य तौर पर पौधे से पौधे के बीच की दूरी 8 x 8 मीटर रखना उपयुक्त है। पौधे रोपण से 1 माह पहले गड्ढे खोद लेने से इसमे पाये जाने वाले मृदा जनित रोग तापमान के कारण नियंत्रित हो जाते है। पौधे की रोपाई के लिए संभवतः जुलाई-अगस्त अच्छा माना जाता है। गड्ढे मुख्यतः 0.75 x 0.75 x 0.75 मीटर के आकार के बनाये जाने चाहिए।

गड्ढे करने के दौरान यदि कंकड़-पत्थर आए तो उसे बाहर निकाल कर फेंक देना चाहिए। पौधे रोपण से पूर्व मिट्टी, कम्पोस्ट (2 एवं 1 के अनुपात) एवं प्रति गड्ढा 10-20 ग्राम

ISSN No. 2583-3316

थिमेट का प्रयोग करने से नाशि कीटों से निवारण होता है। यदि बागवानी हेतु चयनित क्षेत्र ऊसर प्रकृति के हो तो उसमे जिप्सम का प्रयोग करके पौधे लगाने से इसकी वृद्धि अच्छी होती है। बेल की सघन बागवानी हेतु पौधे से पौधे की बीच की दूरी 5 x 5 मी. उपर्युक्त मानी जाती है।

खाद एवं उर्वरक का प्रयोग

पौधों की सफल वृद्धि, अधिक फलन, स्वास्थ्य इत्यादि मृदा की उर्वरता पर निर्भर करती है। पौधे लगाने के एक वर्ष बाद 10 किग्रा सड़ी हुई गोबर की खाद, 50-75 ग्राम नाइट्रोजन, 25-30 ग्राम फॉस्फोरस एवं 50 ग्राम पोटास की मात्रा प्रति पौध डालना उचित रहता है। उर्वरक की मात्रा पौधें की आयु एव मृदा उर्वरता के अनुसार ही प्रयोग करना चाहिए। ऊसर मृदा मे लगाये गये पौधों पर मुखतः जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई देते है। इस प्रकार के पौधों पर 250 ग्राम प्रति पौधे की दर से उर्वरकों के साथ 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट का पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। बेल के जिन बागों मे बेल फटने की समस्या हो तो उनमे खाद एवं उर्वरक के साथ 100 -150 ग्राम प्रति वृक्ष मे बोरेक्स का प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाई

बेल के पौधे मुख्यतः सूखा सहिष्णु प्रकृति के होते है

परंतु नये पौधों को लगाने के पश्चात् 1-2 वर्ष तक समय-समय पर पानी देते रहने से पौधे अच्छी वृद्धि करते है। गर्मियों के दिनों मे मुख्यतः बेल का पौधा अपनी पत्तियाँ गिराकर सुप्तावस्था मे चला जाता है। इस प्रकार पौधों में सूखा सहिष्णु क्षमता बढ़ जाती है। सिंचाई मुख्य रूप से जून-जुलाई माह मे 10-15 दिन के अंतराल मे करते रहने से बेल मे फलन अधिक होता है।

पलवार (मल्चिंग)

शुष्क प्रभावित क्षेत्रों में नमी शुष्कता निवारण के लिए पौधों के थाले को सिंचाई के पश्चात् अथवा वर्षा के अन्त समय में वर्गाकार थाले में कार्बनिक जैसे कि सूखा धन का पुवाल, घास की पुवाल, मक्के का डंठल एवं अन्य पदार्थो और अकार्बनिक (काली प्लास्टिक) का प्रयोग करते हुए 20 से.मी. तक आच्छादित करना चाहिए, पलवार आच्छादित करने से भूमि में नमी बरकरार रहती है व किसान मित्र केंचुआ और लाभदायक सूक्ष्म जीवों की मात्रा में बढ़ोत्तरी होती है। इस प्रकार भूमि की उर्वराशक्ति तत्पर बनी रहती है एवं मृदा को प्रभावित करने वाले अन्य कारक जैसे पी.एच.ई.सी. आदि में सुधार तथा मृदा का तापमान भी नियंत्रत रहता है। अतः इसमें पौधे का विकास अच्छा होता है एवं अधिक समय तक पलवार रखने से 10-20 प्रतिशत तक उत्पादन मे भी वृद्धि होने की संभावना होती है।

वृद्धि एवं विकास हेतु सघाई, छँटाई एवं छत्तक प्रबंधन

पौधों की अच्छी वृद्धि एवं विकास हेतु सघाई मुख्यतः सुधरी प्ररोह विधि से करना सर्वोत्तम माना जाता है। बेल के पौधों मे विशेष सघाई की जरूरत नहीं होती परंतु सूखी, कीटों एवं बीमारियों से ग्रसित टहनियो को समय-समय पर निकालते रहना चाहिए।

सघाई का काम मुख्यतः शुरुआत के 2-4 वर्षों मे ही करना उचित रहता है। छँटाई हेतु मुख्य तने को 75 से.मी. तक अकेला एवं 4-6 मुख्य शाखायें चारों दिशाओं में बढ़ने हेतु छोड़ देना चाहिए। इस प्रकार सघाई करते रहने से अपनी इच्छानुसार घेराव (केनोपी) का प्रबंधन किया जा सकता है। मुख्यतः पौधें की डालियों को पत्तियाँ गिराने के पश्चात् एक वर्ष पुराने शाखा को लगभग 25 प्रतिशत हिस्सों से काटकर हटा देना चाहिए। कटे हुए शाखाओं से नई-नई शाखायें निकलती है, जिससे पौधों का घेराव घना हो जाता है। इस प्रकार सूर्यताप से फलो के झुलसने की संभावना कम रहती है।

अन्तः फसलें

बेल के बगीचे में दो कतारों के बीच के खाली स्थान मे समय-समय पर जैसे जायद, खरीफ एवं रबी के समय विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ लगाकर अपनी आमदनी मे वृद्धि कर सकते है।

अन्तः फसलें लगाने से पहले यह ध्यान रखना चाहिए कि पौधों को अधिक जल की आवश्यकता ना ही हो ताकि मुख्य फसलों पर इसका कोई बुरा प्रभाव ना पड़े। ताकि अन्तः फसल के रूप मे लगे सब्जियों की सिंचाई टपक विधि से करना चाहिए, जिससे पानी की बचत के साथ-साथ मुख्य फसले प्रभावित ना हो मुख्यतः उनुपजाऊ भूमि हेतु समय पर सनयीए ढेंचा की फसले लगाकर उन्हे वर्षा ऋतु मे पलट देने से मिट्टी के स्वास्थ्य मे सुधार किया जा सकता है।

रोग

बेल कैंकर: यह रोग मुख्यतः जैन्थोमोनस विल्वी बैक्टीरिया द्वारा प्रसारित होता है। इस रोग से प्रभावित भागों पर पानी दार धब्बे बनते है, जो कि बाद में बढ़कर भूरे रंग मे परिवर्तित हो

जाते है। इस रोग के लक्षण देखते ही इसके उपचार हेतु मुख्य रूप से स्टेप्टोसाइक्लीन (200 पीपीम) को पानी मे घोलकर 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।

छोटे फलों का गिरना: इस रोग का प्रसारण मुख्यतः फ्यूजेरियम नामक फफूँद के द्वारा होता है। इस रोग से प्रभावित पौधे मे डंठल एवं फल के बीच फफूँद विकसित होते है, जिससे जुड़ाव कमजोर हो जाता है। इससे प्रभावित फल गिरने लगते है। इस रोग के नियंत्रण हेतु जब फल छोटे हो तो कार्बेन्डाजिम का 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।

डाई बैक: इस रोग का प्रसारण मुख्यतः *लेसियोडिप्लोडिया* नामक फफूँद के द्वारा होता है। इस रोग से प्रभावित पौधें की टहनियाँ एवं पत्तियों पर भूरे धब्बे दिखाई देते है एवं ऊपर से नीचे की तरफ सूखने लगती है। इस प्रकार इसके नियंत्रण हेतु सूखी टहनियों को छाटने के पश्चात् कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।

फलों का सड़ना: बेल के बड़े आकार के फल मुख्यतः अप्रैल-मई माह मे बहुतायत गिरते है। गिरे हुए फल चोट लगने के बाह्यत्वचा में हल्की फटन हो जाती है। इस प्रकार फलो मे सड़न तेजी से होती है। फलों मे *स्परजिलस* फफूँद तेजी से विकसित हो जाता है, जिससे अंदर का गुद्दा अधिक मुलायम तथा तीक्ष्ण गन्धदार हो जाता है। इसके नियंत्रण हेतु फलो को सावधानी से तोड़ना चाहिए ताकि फल नीचे जमीन पर न गिरे, जिससे फलों की त्वचा प्रभावित नही होगी।

कीट

बेल मुख्यतः बहुत कम कीटों के द्वारा प्रभावित होता है। कुछ कीट जैसे पर्णसुरंगी एवं पर्णभक्षी इल्ली, जो की थोड़ा बहुत हानि पहुँचाते है। इसकी रोकथाम हेतु थायोडॉन (0.7 प्रतिशत) का 2-3 छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर करते रहना चाहिए।

फलों की तुड़ाई, उपज एवं भंडारण

फलों को फूल लगने से पकने मे कुल 11 माह का समय लग जाता है। फल मुख्यतः अप्रैल-मई माह मे तोड़ने योग्य हो जाते है। फल हमेशा गहरे हरे रंग से बदलकर पीला हरा होने लगे तब फलों की तुड़ाई 2 से.मी. डंठल के साथ करनी चाहिए। बेल क्लाइमेक्टेरिक फल होता है। इसलिए इसकी तुड़ाई अर्धपक्व अथवा पूर्ण परिपक्व से पहले कर सकते है। फलों को तोड़ते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए की फल जमीन पर न गिरे अन्यथा फलों की त्वचा छिटक सकती है, जिससे भंडारण के समय इसमे सड़न की संभावना बढ़ जाती है। कलमी पौधें मे 3-4 वर्षों के पश्चात् फल लगना शुरू हो जाता है। जबकि बीजू पेड़ 7-8 वर्षों के बाद फल देते है। फलों की संख्या मुख्यतः वृक्ष की आयु, जलवायु एवं उचित प्रबंधन पर निर्भर करती है। पूर्ण विकसित (10-12 वर्ष) वृक्ष से मुख्यतः 100-150 फल प्राप्त किया जा सकते है।

उपयोगिता

बेल एक लाभकारी फल है। कच्चे बेलो को भूनकर खाने से भूख की समस्या एवं पेट से संबन्धित अन्य समस्या से निजात पाया जा सकता है। पके हुए बेल के गुद्दे को निकाल कर सुखाने के बाद प्रति दिन दूध के साथ लेने से पेट एवं अन्य समस्या से छुटकारा मिल सकता है। पके हुए बेल के जूस को निकाल कर शरबत के रूप मे प्रयोग करने से हृदय से संबन्धित रोग एवं मस्तिष्क के विकास मे सहायता करता है। पके हुए फलो के पल्प को निकालकर संरक्षिक करके पूरे साल इसका प्रयोग करने से मानव विभिन्न समस्याओं से छुटकारा पा सकते है एवं किसान भाई अधिक मात्रा मे बेल के बगीचों को लगाकर जूस, पल्प, जाम, पाउडर, स्क्वाश इत्यादि को प्रसंस्कृत करके अपनी उपयोगिता के साथ-साथ बाजारो मे भेजकर अपनी आमदनी मे भी बढ़ोत्तरी कर सकते है।

निष्कर्ष

शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों मे इसकी खेती उपरोक्त विधि से करने पर प्रतिवर्ष उपज मे बढ़ोत्तरी कर सकते है। शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों मे इसका चयन इसीलिए करना चाहिए ताकि बेल का पौध अपना वृद्धि एवं विकाश अपेक्षाकृत कम पानी में भी सुचारु रूप से कर लेते है। इसकी मूसलाधार जड़ो के होने से यह काफी दिनों तक अन्य पौधे की तुलना मे पानी की खोज कम करता है। इस प्रकार प्राप्त उपज को प्रति वर्ष बाजार मे भेजकर आय अर्जित कर सकते है। इसके फलों से विभिन्न उत्पाद जैसे जूस, पल्प, जैम, पाउडर इत्यादि बनाकर अपनी आय के साथ-साथ इससे जुड़े लोगों की आय मे बढ़ोत्तरी की जा सकती है। इसके औषधीय गुणों के कारण इसकी उचित मात्रा मे प्रयोग करके अपने-आपको एवं अन्य लोगों को सुरक्षित रखा जा सकता है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

जैविक खेती

संज्ञा पयासी, ओपेन्द्र कुमार सिंह*, आशुतोष मिश्र, उमाशंकर मिश्र एवं पावन सिरोठिया

प्राकृतिक संसाधन विभाग, कृषि संकाय महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट

पत्राचारकर्ता: singhopendra8@gmail.com

परिचय

भारत में प्रचीन समय में एक कहावत प्रचलित थी। ''उत्तम खेती मध्यम वान, अधम चाकरी भीख निदान'' अर्थात सबसे बेहतर काम है खेती करना, फिर व्यापार करना, फिर कहीं नौकरी करना और अंत में कुछ ना मिले तो भीख माँग कर अपना गुजारा करना। लेकिन आज के दौर में जो इसका उल्टा ही है। लोग नौकरी करना ज्यादा पंसद करते है, बजाय खेती करने के और जो किसान खेती कर भी रहे है। तो उन्हे खेती छोड़ने को मजबूर होना पड़ रहा है। कारण यह है कि अनाज उत्पादन में लागत ज्यादा और अनाज का उत्पादन कम मिल रहा है। लेकिन विगत कुछ वर्षो से भारत में खेती की नई तकनीक अपनाई जा रही है, जिसे जैविक खेती कहा जाता है। इसमें अनाज उत्पादन में लागत कम और अनाज उत्पादन ज्यादा होता है।

जैविक खेती फसल उगाने की वह नई तकनीक है, जिससे रासायनिक खादों वा कीटनाशको का प्रयोग करने के बजाय, जैविक खाद, हरी खाद, गोबर खाद, गोबर गैस खाद, केंचुआ खाद आदि का प्रयोग किया जाता है। खेती करने के इस नए तरीके को ''जैविक खेती'' कहा जाता है।

जैविक खेती के उद्देश्य एवं सिद्धान्त

जैविक खेती का प्रारूप निम्नलिखित प्रमुख क्रियाओं के क्रियान्वित करने से प्राप्त किया जा सकता है।

- कार्बनिक खादो का प्रयोग।
- जीवाणु खादों का प्रयोग।
- फसल अवशेषों का उचित उपयोग।
- जैविक तरीको द्वारा कीट व रोग नियन्त्रण।
- फसल चक्र में दलहनी फसलों को अपनाना।
- मृदा संरक्षण क्रियाएँ अपनाना।

जैविक खेती सजीव पारिस्थितिकी प्रणालियों और चक्रों पर आधारित होनी चाहिए। इसे इनके साथ करना चाहिए, उनका अनुकरण करना चाहिए और उन्हे बनाए रखने में मदद करनी चाहिए।

जैविक खेती के 4 प्रमुख सिद्धान्त है।

- स्वास्थ्य
- पारिस्थितिकी
- देखभाल
- निष्पक्षता

जैविक खेती के प्रकार: जैविक खेती मुख्य रूप से दो प्रकार की होती है।

- **एकीकृत जैविक कृषि:** एकीकृत जैविक खेती में पारिस्थितिक आवश्यकताओं और माँगों को प्राप्त करने के लिए कीट प्रबंधन और पोषक तत्वों के प्रबंधन का एकीकृत शामिल है।
- **शुद्ध जैविक कृषि:** शुद्ध जैविक खेती का अर्थ है, सभी अप्राकृतिक रसायनों और कीटनाशक प्राकृतिक स्त्रोत जैसे अस्थि, भोजन या रक्त भोजन से प्राप्त किए जाते है।

जैविक खेती के लिए सस्य प्रबंधन

- समय पर बुवाई।
- खरपतवार नियन्त्रण।
- सही किस्मों का चुनाव।
- सही फसल चक्र।
- खरपतवार नियन्त्रण हेतु यन्त्रों का प्रयोग।
- स्वच्छ खेती।
- लगातार एक ही फसल को नहीं लेना चाहिए।
- हरी खाद को अपनाना चाहिए।
- आनुवांशिकी रूपान्तरण करना चाहिए।
- पशुओं के चारे की व्यवस्था अपने खेत में ही करना चाहिए।

ISSN No. 2583-3316

जैविक खेती में पोषक तत्वों का प्रबंधन

- मृदा की उर्वरता को बनाए रखना चाहिए।
- खेत के सभी फसल अवशेषों का खाद में उपयोग करना चाहिए।
- जैव उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए।
- बायोगैस सलरी का उपयोग करना चाहिए।

जैविक खेती का आधर

- गौ-पालन
- नीम-उत्पादन
- केंचुआ खाद
- बायोगैस सलरी
- जीवांश खाद
- मित्र कीटों का संरक्षण
- हरी खाद
- फसल चक्र
- जैव उर्वरकों का उपयोग
- वनस्पतियों का समुचित उपयोग

जैविक खाद्यान्न की आवश्यक

- जैविक खाद्यान्न खाने में स्वादिष्ट एवं पोषक तत्वों से भरपूर है क्योंकि जैविक खाद्यान्नों में विटामिन एवं खनिज आदि की प्रचुर मात्रा होती है। जिसका विवरण निम्नानुसार है।

मिनिरल मिली एक्यूवेंटस प्रति 100 ग्रा.

पोषक-तत्व	जैविक पद्धति से उत्पादित खाद्यान्न	रासायनिक पद्धति से उत्पादित खाद्यान्न
1.कैल्शियम	23	4.4
2. मैग्नीशियम	59.2	4.5
3. पोटेशियम	148.3	5.86
4. सोडियम	6.5	0
5. मैग्नीज	68	1
6. आयरन	193.8	9
7.कॉपर	53	0

- रासायनिक उर्वरको का उपयोग भूमि में नाइट्रेट्स की अधिकता का संग्रहण कर मानवीय स्वास्थ्य विशेष कर शिशुओं की सेहत कर दुष्प्रभाव डालता है।
- जैविक खाद्यान्न के उपयोग से हम आने वाली पीढ़ी को गम्भीर बीमारियों से बचा सकते है क्योंकि जैविक खाद्यान्न हमें रसायनों से मुक्त भोजन के साथ-साथ संतुलित पर्यावरण वा उपयोगी जीवों हेतु सहायक है।
- भारत के महानगरों में उपभोक्ता जैविक खेती से पैदा हुई सब्जियों,फलों और अन्य उत्पादों का मूल्य बाजार मूल्य से अधिक देने की पेशकश करते है। जो ''जैविक उत्पाद'' की महत्ता को दर्शाता है।
- बीज निगम के जैविक उत्पाद मध्यप्रदेश राज्य जैविक प्रमाणीकरण संस्था भोपाल से अभिप्रमाणित है। निगम द्वारा बुरहानपुर व खमरिया प्रक्षेत्रों चर विशुद्ध जैविक उत्पादन प्रारम्भ कर चना, मटर, गेहूँ आदि जैविक खाद्यन्नों का विक्रय किया जा रहा है।

जैविक खेती के राष्ट्रीय मानक

जैविक कृषि के राष्ट्रीय कार्यक्रम के अर्न्तगत व्यापार मन्त्रालय ने जैविक कृषि के राष्ट्रीय मानक निर्धरित किये है। ये मानक मुख्य 6 भागों में बाँटे है।

- फसल उत्पादन
- पशु पालन
- खाद्य प्रसंकरण एवं संचालन
- नामांकन या लेबल लगाना
- भण्डारण एवं परिवहन

जैविक खेती के मुख्य तथ्य

- भारत दुनिया का नौवा सबसे बड़ा जैविक खेती वाला देश है।
- सिक्किम भारत का पहला जैविक खेती वाला राज्य 2016 में घोषित हुआ है।
- त्रिपुरा राज्य का दशपारा गाँव पहला, भारत का जैविक खेती करने वाला गाँव है।
- कृषि मन्त्रालय के अर्न्तगत राष्ट्रीय जैविक खेती केन्द्र ''राष्ट्रीय जैविक खेती अभियान'' के कार्यान्वयन के लिए जिम्मेदार है। यह गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश मे स्थिति है।

- डॉ. कृष्ण चन्द्र, राष्ट्रीय जैविक खेती के निदेशक और वेस्ट डीकम्पोजर की खोज करने वाले प्रधान वैज्ञानिक है।
- भूटान दुनिया का पहला पूर्ण जैविक देश है।

जैविक खेती के लाभ

- जैविक कृषि से मृदा की उर्वरता एवं गुणवत्ता में सुधार होता है।
- जैविक खेती में उपयोग होने वाले जैविक खादों एवं जैविक कीटनाशकों का निर्माण स्वयं किसान कर सकते है।
- जैविक खेती अपनाकर बाहय आदानों पर निर्भरता को कम किया जा सकता है।
- जैविक खेती जैव विविधता, प्रकृति खेती, स्वस्थ्य संरक्षण तथा पर्यावरण की दृष्टि से लाभदायक है।
- जैविक खेती से ही मृदा में जलधारण क्षमता में वृद्धि की जा सकती है।
- जैविक खेती उत्पादन का मूल्य रासायनिक उत्पाद से बाजार में अधिक मिलता है।
- दलहनी फसलों के उपयोग से नत्रजन स्थरीकरण क्रिया में वृद्धि होती है।

जैविक खेती के मार्ग में बाधायें

- भूमि संसाधनों को जैविक खेती से रासायनिक में बदलने में अधिक समय नही लगता लेकिन रासायनिक से जैविक में जाने में समय अधिक लगता है।
- जैविक खेती में शुरूआती समय में उत्पादन में कुछ गिरावट आ सकती है, जो कि किसान सहन नही करते है। अतः इसके हेतु उन्हे अलग से प्रोत्साहन देना जरूरी है।
- जैविक खेती के निर्यात के लिए उचित बाजार की व्यवस्था ना होना बड़ी चुनौती है।
- जैविक खेती में उपज बढ़ाने के लिए बायोफर्टिलाइजर का मँहगा होना।

निष्कर्ष

भारत को कृषि प्रधान देश माना जाता है भारत में कृषि परंपरा का इतिहास बहुत पुराना है। इस देश की 70 प्रतिशत जनता अपनी अजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। जैविक खेती रासायनों से होने वाले दुष्प्रभाव से पर्यावरण का बचाव करती है। भूमि की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि करती है। फसलों की पैदावार में बढ़ोतरी होती है। अतः हमें खेतों में उपलब्ध जैविक साधनों की मदद से खाद, कीटनाशक दवा, चूहा नियत्रंण के लिए जैविक दवा इत्यादि बनाकर उनका उपयोग करना चाहिए। इन तरीकों से फसल भी अधिक मिलेगी और अनाज, फल, सब्जियाँ भी इस विषमुक्त उत्तम होगी।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

परवल, कुन्दरू एवं ककोड़ा (खेखसा): महत्त्व एवं प्रवर्धन

प्रमिला*, उदित कुमार एवं कृष्ण कुमार शर्मा

उद्यान विज्ञान विभाग, डॉ राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय पूसा, समस्तीपुर

पत्राचारकर्ता: prmtca@gmail.com

परवल

खाद्य सुरक्षा, पोषण एवं उत्पादन में लाभ हेतु परवल, कुन्दरू एवं खेखसा की खेती अत्यन्त लाभकारी साबित हुई है। परवल, कुन्दरू एवं खेखसा कद्दूवर्गीय सब्जियों के अंतर्गत आते हैं। ये तीनों ही बहुवर्षीय एकालिंगी पौधे हैं, जिनका प्रवर्धन ज्यादातर वानस्पतिक विधि द्वारा होता है। अन्य सब्जियों की उपेक्षा इन तीनों में औषधीय गुण कूट-कूट कर भरे होते हैं जो, की निम्न प्रकार से हैं।

परवल, कुन्दरू एवं ककोड़ा का महत्तव

परवल का महत्त्व

परवल में विटामिन ए, विटामिन बी-1, विटामिन बी-2 और विटामिन सी भरपूर मात्रा में होता है। परवल वात, पित और कफ को कम करने में सहायक होने के साथ खून को साफ करने, कृमि नाशक, बुखार में राहत दिलाने, मूत्र विसर्जन के समय दर्द, जलन आदि में राहत देने वाला, मुँह या गले का सूख जाना, खाने में रूची को बढ़ाने वाला है।

यह डाइविटीज, एसीडिटी, पीलिया, फोड़े, कुष्ट रोग, चेचक, कब्ज, वजन कम करने, पाचनतंत्र विकार सुधारने, दस्त में कोलेस्ट्रॉल नियंत्रित करने और ब्लड शुगर को नियंत्रित करने के साथ ही नशा छुड़ाने, सिर दर्द एवं आँखों के रोगों में लाभकारी है। आर्युवेद में परवल की पत्तियाँ, जड़, फल तथा पंचाग औषधि के रूप में ज्यादा प्रयोग किये जाते हैं।

कुन्दरू का महत्त्व

यह विटामिन एवं मिनरल का अच्छा स्त्रोत है। कुन्दरू की सब्जी में आयरन, विटामिन बी-2 (राइबोफ्लेविन), विटामिन बी-1 (थियामिन), विटामिन-ए, फाइबर और कैल्शियम होता है। यह कफ एवं पित को कम करने में सहायक होने के साथ पाचनतंत्र के लिए फायदेमंद, मोटापा कम करने में उपयोगी, एन्टी माइक्रोवियल और एन्टी बैक्टीरियल होने के कारण संक्रमण से बचाव, रोगप्रतिरोधी क्षमता बढ़ाने, डाइविटिज नियंत्रण करने, तंत्रिका तंत्र को मजबूत करने, मैटाबोलिज्म को बढ़ाने, किडनी स्टोन ठीक करने तथा कैंसर में भी लाभकारी होता हैं। इसकी जड़े, पत्तियाँ, फूल, फल आदि आयुर्वेद में विशेष रूप से उपयोग किया जाता है।

ककरोल का महत्त्व

ककोड़ा में मल्टीविटामिन पाए जाते हैं। इसमें एक दो पोषक तत्व नहीं बल्कि सभी पोषक तत्त्व बहुतायत मात्रा में होते हैं। ककोड़ा में प्रोट्रीन, फाइबर, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन बी.1, बी.2, बी.3, बी.5, बी.6, बी.9, बी.12, विटामिन.ए, सी, के, विटामिन.डी2 एवं डी3, कैल्शियम, मैगनीशियम, पोटैशियम, सोडियम, कॉपर, जिंक आदि पायें जाते हैं। यह त्रिदोष यर्थातवात पित कफ नाशक है।

ककोड़ा सिरदर्द, बाल झड़ना, कानदर्द, खासी, पेट के इंफेक्शन, बवासीर, पीलिया, किडनी स्टोन, डाइविटिज, दाद, खाज, खुजली, लकवा, सूजन, बेहोशी, बुखार, आँखों

ISSN No. 2583-3316

की समस्या, ब्लडप्रेशर एवं कैंसर आदि रोगों में फायदेमंद होता है। साथ ही गर्भावस्था में भी बहुत फायदेमंद है। आयुर्वेद में इसकी जड़े, फूल तथा पत्तियों का प्रयोग अधिक मात्रा में किया जाता है।

परवल का प्रवर्धन

परवल का प्रवर्धन व्यवसायिक तौर पर वानस्पतिक विधि द्वारा लत्ती की कटिंग या जड़ अंकुर द्वारा किया जाता है। बीज द्वारा संवर्धन नहीं किया जाता क्योंकि 50 प्रतिशत पौधे मादा एवं 50 प्रतिशत पौधे नर में विभक्त हो जाते हैं। यदि बीज से प्रवर्धन करना पड़े तो बीज का 0.005 प्रतिशत जीवरौलिक एसिड और 0.5 प्रतिशत थायोयूरिया से 24 घंटे पहले शोधन कर लगाने से बीज की अंकुरण क्षमता बढ़ जाती है।

लत्ते की कटिंग

लूंडा एवं लाचीतरिका: इस विधि में परिपक्व लत्ते 1-1.5 मीटर लम्बी हो, जिसमें 8-9 गाँठ हो 8 के आकार में मोड़ा जाता है, जिसको लूंड़ा एवं लाची कहते हैं। लाची गढ़डे में, समतल पर या 3-5 से.मी. गड्ढे के अंतर दबाकर लगाया जाता है। ताजी गोबर की खाद गड्ढे के बीचों-बीच डाल देते हैं, जो अंकुरण क्षमता को बढ़ाता है।

आर्द्रलम्प विधि: इस विधि के अन्तर्गत 60-90 से.मी.

लम्बा लत्ती गोलाकार दोनो किनारों पर 15 से.मी. बाहर छोड कर लगाया जाता है। इस लम्प विधि में 10 से.मी. गहरा गड्ढ़ा, जिसमें 15 से.मी. लत्ती बाहर छोड़कर गड्ढ़े को भर दिया जाता है, जो लत्ती गड्ढ़े के अंदर है उसमें जड़ एवं जो लत्ती बाहर हो उससे अंकुरण प्रस्फूटित होते हैं।

सीधी लत्तर विधि : इस विधि में लतर को 15 से.मी. गहरे गड्ढ़े में लगाया जाता है, जो 2 मीटर खुला होता है, जिसमें सड़ी गोबर की खाद एवं मिट्टी मिलाकर डाल देते हैं।

छल्ला विधि : लत्ती की कटिंग को छल्ले का रूप दिया जाता है। एक या इस विधि में दो तिहाई रिंग के भाग को माउन्ड में गाड़ दिया जाता है।

पौध द्वारा प्रवर्धन: अकसर लत्ती काट कर परवल का प्रवर्धन किया जाता है, जिससे उसे लगने में 2-3 महीने का वक्त लगता है। साथ ही जरूरी नहीं कि सभी लत्तर लग ही जाए इस विधि से 30 प्रतिशत ही सफलता मिलती है। पौध

लगाना एक बेहतर विकल्प है, जिससे कम समय में फलन होने लगता है तथा प्रवर्धन भी कम समय में हो जाता है। अगस्त महीने में पौधे की लत्ती को जमीन पर गिरा देते हैं। उसमें थोड़ी जड़े आने लगे तो लत्ती को काट कर सितम्बर महीने में मिट्टी एवं वर्मीकम्पोस्ट मिली पॉलीथीन बैग में लगा देते हैं। पौध को लगातार पानी देते हैं। थोड़े ही समय में अंकुर आ जाता है, जिसे अक्टूबर में जमीन में रोपण कर सकते हैं।

जड़ कटिंग: जब कम पौधे रोपण के लिए हो और एक जैसे पौधे ज्यादा संख्या में बनाने हो तब जड़ कटिंग द्वारा संवर्धन किया जाता है। इस विधि से संवर्धन आसानी से एवं जल्दी हो जाता है।

कुन्दरू का प्रवर्धन: इसे बीज एवं तने की कटिंग द्वारा किया जाता है।

बीज द्वारा प्रवर्धन: बीज द्वारा प्रवर्धन उचित नहीं है क्योंकि यह एकालिंगी पौधा है। बीज से प्रवर्धन करने पर 50 प्रतिशत पौधे नर एवं 50 प्रतिशत पौधे मादा होने की संभावना रहती है, जबकि पौधे के उचित फलन के लिए 1 नर पौधा प्रति 10 पौधे में आवश्यक है। यह भी देखा गया है कि बीज से प्रवर्धित पौधे देर से फूलन एवं फलन में आते हैं।

तने की कटिंग: चार से पाँच महिने परिपक्व तने की

ISSN No. 2583-3316

कटिंग मुख्यतः प्रवर्धन के लिए उपयोग की जाती है। कटिंग, जो 5-6 पत्तियों वाली हो, 25-30 से.मी. लम्बी एवं पेंसिल के जितनी मोटाई वाली होनी चाहिए, जिसे लगभग 2 मीटर दूरी पर 60 से.मी. गहराई में रोपते हैं। कुन्दरू, जुलाई-अगस्त में प्रवर्धन के लिए तैयार हो जाता है, जब लतर भी बहुतायत में उपलब्ध होती है एवं साथ ही अंकुरण के लिए अनुकुल तापमान उपलब्ध होता है। लेकिन यह समय कुन्दरू के फल एवं फूल देने का होता है। अतः इसे अक्टूबर-नवम्बर महीने में लगाते हैं, जब फलन कम हो जाता है। इस महीने में कटिंग या तो पॉलीहाऊस के अन्दर या पॉलीथीन बैग में लगाते हैं। पॉलीथीन बैग 20 X 15 से.मी., जिसमें 3-4 छेद हो तथा कम्पोस्ट एवं मिट्टी बराबर मात्रा में भरी हो। उसमें 5-7 नोड वाले कटिंग को 5-6 से.मी. गहरायी में लगाते हैं।

ककरोल का प्रवर्धनः सामान्यता बीज, कंद एवं लत्ती के कंटिग द्वारा की जाती है।

बीज से प्रवर्धनः बीज जो तुरंत फल से निकाले जाते हैं। प्रवर्धन के लिए उपयुक्त नहीं होते क्योंकि उनमें 5-6 महीने का प्रसुप्त अवधि की आवश्यक होती है।

कंद से प्रवर्धनः क्योंकि कंद में प्रसुप्त अवधि की आवश्यकता नहीं होती, इससे ककरोल को तुरंत ही प्रवर्धित किया जा सकता है। कंद 2-3 साल पूराने पौधे से, जो 80-120 ग्राम तक हो प्रवर्धन के लिए उचित होते हैं, कंद से प्रवर्धित पौधे जल्द फलन देने लगते हैं। बीज से 20-25 दिन पूर्व अंकुरित हो जाते हैं फूल 48-55 दिनों में आने लगते हैं एवं फल 80 दिनों में खाने लायक प्राप्त हाने लगते हैं।

लत्ती कटिंग से प्रवर्धनः जब बारिस का मौसम हो एवं वातावरण में अच्छी आर्द्रता हो तब कटिंग, जो 5-7 से.मी. लम्बी तथा जिसमें 1-2 गाँठ हो प्रवर्धन के लिए उचित होते हैं। पॉलीथीन बैग में 2:1:1 बालू : मिट्टी : कम्पोस्ट के मिश्रण में लगाते हैं एवं स्प्रे-कलर द्वारा पानी देते हैं। इसमें कटिंग लगाने के 15-20 दिन बाद अंकुरण दे देते हैं। जब कटिंग में 3-5 पत्तियाँ आने लगे तब इसका स्थानांतरण मुख्य जमीन में कर देते हैं।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

खस की खेती की संभावनायें एवं उसके लाभ

अंकित पाण्डेय* एवं एस. सी. तिवारी

वानिकी वन्य जीव एवं पर्यावरण विज्ञान विभाग

गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर

पत्राचारकर्ता: ankitforestry21@gmail.com

परिचय

खस घास या वेटिवेर, *वेटिवेरिया जिजेनिओइड्स* (*Vetiveria Zizanioides*) या *क्राइसोपोगान जीजनिओडस* (*Chryosopogon Zizanioides*) का ही सामान्य नाम हैं, जो पोयेसी (Poaceae) कुल की सदस्य है। खस शब्द का उद्गम तमिल भाषा के *वेटिवेरु* से आया हैं। खस एक कड़ी प्रवृत्ति की बहुवर्षीय घास है, जो की सूखे एवं जलभराव दोनों स्थितियों में पाया जाता हैं। यह देश के लगभग सभी हिस्सों मे जंगली अवस्था में पाई जाती हैं। खस घास की प्रमुख उपयोगिता जड़ों में पाये जाने वाले तेल के कारण है, जो की अत्यंत सुगंधित होता है एवं इसका प्रयोग औद्योगिक क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के सुगंधित उत्पाद बनाने में किया जाता हैं। जैसे कि इत्र, साबुन, शर्बत, पान मसाला तथा अनेक सौन्दर्य प्रसाधनों में भी किया जाता है। खस की तासीर ठण्डी होती है। इसलिए खस का शरबत गर्मियों में पीने के लिए एक फायदेमंद और बेहतरीन पेयजल है। साथ ही इसका प्रयोग औषधीय प्रणाली के लिए भी होता है। खस के पौधे सीधे होते है एवं इनके पत्तियों की लंबाई 120-150 से.मी. तक एवं चौड़ाई 0.8 से. मी. तक होती हैं। खस की जड़ प्रणाली बहुत बारीक, रेशेदार एवं मजबूत होती है, जो जमीन में 2-4 मी. गहराई तक जाती हैं। खस का पुष्प क्रम शंक्वाकार एवं पुष्पगुच्छ 15-40 से. मी. लंबा, चमकीला एवं सामान्यतः लाल भूरे अथवा बैंगनी रंग का पाया जाता हैं। खस घास की बीज उत्पादन क्षमता कम होती है एवं प्रवर्द्धन के समय बीजों का अंकुरण प्रतिशत भी बहुत काम (10-15% IGFRE crop ref.) होता है। इसलिए खस का प्रवर्द्धन बीज के अलावा स्लिप्स के माध्यम से प्रमुखता से किया जाता ह। खस एक बहुत उपयोगी घास है, जिसका प्रयोग रस्सी बनाने, पुआल की छत बनाने, रेशा बलनाने, बाल्टी बनाने तथा प्राचीन समय में इसका प्रयोग घरों में परदे के रूप में भी किया जाता रहा है। विश्व स्तर पर खस के तेल की माँग 300 टन प्रति वर्ष है, जिसमें भारत का योगदान 20-25 टन ही है। हैती, इंडोनेशिया (जावा) विश्व के प्रमुख खस तेल के उत्पादक देश है।

खस की जड़ें गहरी एवं रेशेदार होने के कारण यह जल एवं म्रदा संरक्षण में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं यह मिट्टी की भौतिक संरचना को अच्छा बनाती है साथ ही मिट्टी की नमी संरक्षण के लिए भी महत्वपूर्ण हैं। गहरी जड़ प्रणाली ही खस को अत्यधिक सूखा सहिष्णु बनाती है एवं मजबूत तेज जल प्रवाह में भी म्रदा के कटाव को रोकती हैं। खस घास का उपयोग उद्यानों की बॉउन्डरी बनाने एवं सुरक्षात्मक घेरा बनाने के लिए एवं सड़क किनारे लगाकर म्रदा क्षरण को रोकने में किया जा सकता हैं। खस घास का प्रयोग वनों में नये पौधों के रोपण के समय लगाकर परिचारक फसल के रूप में भी किया जा सकता है, जिससे की पौधे की सुरक्षा एवं उनके विकास में सहायक होती है, साथ ही साथ ऐसे वन जहाँ पर आगजनी की संभावनायें अधिक होती है, उन जगहों में वनों को आग से बचाने के लिए खस का प्रयोग लाइव फायर लाइन बनाने मे भी किया जाता है, जो की आग फैलने की गति को भी कम करने में सहायक होता हैं।

ISSN No. 2583-3316

वितरण एवं वानस्पतिक विवरण

खस घास का उद्गम स्थल भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका, बांग्लादेश एवं मलेशिया को माना जाता है, मुख्यतः दक्षिण भारत में माना जाता हैं। खस की खेती दुनिया भर के देशों में जैसेः इंडोनेशिया, मलेशिया, फिलीपींस, जापान, अंगोला, बेल्जियम, कांगो, डोमिनिकन गण राज्य, अर्जेंटीना, ब्रिटिश गुयाना, जमैका, और मॉरीशस में की जाती हैं। भारत मे खस का वितरण गंगा एवं ब्रह्मपुत्र के मैदानी भागों में पाया जाता हैं। खस घास की खेती राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक, असम, मणिपुर, अरुणांचाल प्रदेश, पंजाब में प्रमुखतः से की जाती हैं।

वानस्पतिक विवरणः खस घास में गुणसूत्रों की संख्या 2n=20 (द्विगुणित) एवं 40 टेट्राप्लॉइड पाई जाती हैं।

किंगडमः प्लांटी

फाइलमः स्पर्मेटोफाइटा

क्लासः मोनोकाटीलीडन

फैमिलीः पोएसी

जीनसः क्रयाइसोपोगान

स्पीशीजः क्राइसोपोगान जीजनिओडेस

बिनोमिअल नामः क्राइसोपोगान जीजनिओडेस (L.) रोबर्ती

खस की उन्नत किस्में: खस की कुछ उन्नत किस्में सी एस आई आर- केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान लखनऊ द्वारा व्यावसायिक उत्पादन हेतु विकसित की गई है, जिनमें के.एस.-1, केशरी, गुलाबी, धारिणी, सिम समृद्धि, सीमैप खस-15, सीमैप खस-22, के.एस.-2, सुगंधा, के.एच.-8, हाइब्रिड-7, हाइब्रिड-8, इत्यादि महत्वपूर्ण प्रजातियाँ हैं। खस की खेती व्यावसायिक रूप से केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, असम, उत्तर प्रदेश एवं तेलंगाना में फसल के रूप में की जाती हैं।

खस की खेती कैसे करें

भूमि का चुनावः खस/ वेटिवेर की खेती सामान्यतः सभी प्रकार के म्रदाओं मे किया जा सकता है, परन्तु उथली/ हल्की मिट्टी में लगाने से जड़ों का उत्पादन कम होता है, अंततः तेल का भी उत्पादन कम होता हैं। खस की खेती के लिए अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट/ लाल लेटराइट मिट्टी, जिसमें कार्बनिक पदार्थ की मात्रा भरपूर हो, सर्वोत्तम मानी गई हैं। चिकनी दोमट मिट्टी मे भी खस को उगाया जा सकता हैं। भूमि का चुनाव करते समय ध्यान रखा जाना चाहिए की भूमि समतल हो, जिसमे जल भराव की समस्या न हों क्योंकि जल भराव के कारण नये पौधों की वृद्धि मे कमी देखी जा सकती हैं।

जलवायु एवं तापमानः खस एक अर्ध शुष्क जलवायु का पौधा है एवं यह अत्यधिक तापमान, बाढ़ अथवा अत्यधिक वर्षा वाले स्थानों मे भी उगाया जा सकता हैं। खस की खेती -15° सेल्सियस से लेकर 50° सेल्सियस तापमान तक की जा सकती हैं। जड़ों के विकास के लिए 25° सेल्सियस तापमान उपयुक्त माना गया हैं। खस की खेती के लिए छायादार स्थान उपयुक्त नहीं माना गया है, परन्तु आंशिक छाँव, जहाँ पर पौधे को पर्याप्त सूर्य का प्रकाश प्राप्त हो सके ऐसे स्थानों में उगाया जा सकता हैं।

खस का प्रसारण/ बुवाई/ पौध रोपणः खस को सामान्यतः बीज अथवा स्लिप्स के द्वारा प्रवर्धित किया जा सकता है लेकिन अधिकांशतः स्लिप्स का उपयोग प्रवर्धन के लिए प्रमुखता से किया जाता हैं। बीज का प्रयोग संकर किस्मों के विकास के लिए किया जाता हैं। पौध रोपण से पहले स्लिप्स बनाने के लिए पौधों को भूमि के ऊपर 25 से.मी. की लंबाई से काट कर पौधों को जड़ सहित उखाड़ लिया जाता है एवं सम्पूर्ण भिर्रे से 2-3 शाखाओं वाली स्लिप्स को पौध रोपण के लिए चयनित कर रोपण हेतु बनाया जाता हैं।

रोपाई का समयः सिंचाई की व्यवस्था होने पर खस की रोपाई अत्यधिक ठंड में छोड़कर वर्ष भर कभी भी की जा सकती हैं। खस की रोपाई का उपयुक्त समय मानसून की शुरुआत के साथ जून से अगस्त एवं दक्षिण भारतीय परिस्थितियों मे फरवरी से अप्रैल तक किया जा सकता है, क्योंकि यहाँ मानसून की शुरुआत जल्दी होती हैं।

पौध रोपणः पौध रोपण हेतु उचित भूमि प्रबंधन एवं स्लिप्स तैयार होने के बाद स्वस्थ स्लिप्स को मानसून के प्रारम्भ (जून-अगस्त) में 8-10 से.मी. की गहराई पर 60 x 60 से.मी., 60 x 45 से.मी. एवं 60 x 60 से.मी. पंक्ति से पंक्ति एवं पौधे से पौधे की दूरी पर रोपित किया जाता हैं। खस की रोपाई देर से करने पर काम उपज एवं निम्न गुणवत्ता का तेल प्राप्त होता हैं। पौध रोपण के प्रारम्भिक दिनों (2-3 महीनों) में पौधों में धीमी वृद्धि देखी जा सकती हैं।

सिंचाईः खस एक जलोद्भित पौधा है, यह सामान्यतः बाढ़ के मैदानों, जलाशयों के किनारे पर प्राकृतिक रूप से

ISSN No. 2583-3316

पाया जाता हैं। खस की खेती करते समय पौध रोपण के तुरंत बाद सिंचाई की आवश्यकता होती है एवं शुष्क अथवा कम वर्षा वाले स्थानों में पौधे की वृद्धि के लिए मिट्टी मे नमी बनायें रखना आवश्यक हैं। शुष्क क्षेत्रों मे औसत उपज प्राप्त करने के लिए 8-10 सिंचाई की आवश्यकता होती है एवं नमी संरक्षण के लिए मृदा आच्छादन/ मल्चिंग भी किया जा सकता हैं। वर्षा वाले स्थानों में जहाँ साल भर वर्षा होती है एवं नमी बनी रहती है, में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती हैं। पौध रोपण के बाद नई पौध को ओवरहेड/ फव्वारा विधि से एवं प्रौढ़ फसल को बाढ़ विधि द्वारा सिंचाई की जा सकती हैं।

खाद एवं उर्वरकः फसलों के सम्पूर्ण विकास एवं अधिक उपज प्राप्त करने के लिए पौधों को उचित पोषण की आवश्यकता होती हैं। खस के बेहतर उत्पादन हेतु 10 टन प्रति हेक्टेयर गोबर की खाद को अच्छी तरह से मिट्टी मे मिला देते है तत्पश्चात नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटास, की मात्रा क्रमशः 120 कि. ग्रा., 60 कि. ग्रा., एवं 40 कि. ग्रा., प्रति हेक्टेर प्रति वर्ष के अनुसार देना चाहियें उर्वरक देते समय फॉस्फोरस, पोटास की पूरी मात्रा का प्रयोग एक साथ किया जाता है परन्तु, नत्रजन को 2-3 बराबर भागों मे बाटकर आधी मात्रा रोपाई के समय एवं आधी मात्रा का उपयोग 3 महीने के अंतराल में खड़ी फसल में करते हैं।

खरपतवार नियंत्रण एवं मिट्टी चढ़ानाः खस की रोपाई के प्राथमिक दिनों में पौधों के बीच बचे खाली स्थान में खरपतवार निकल आते है, जिससे की फसल और खरपतवार के बीच पानी, भोजन एवं प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा होती है एवं फसल को नुकसान होने की संभावना बढ़ जाती है, इसलिए रोपाई के 2-3 महीनों तक समय समय पर खरपतवार का नियंत्रण करते रहना चाहिऐं

खरपतवार नियंत्रण करते समय मिट्टी की हल्की गुड़ाई एवं पौधों में मिट्टी चढ़ाया जाना चाहिए, जिससे जड़ एवं पौधे का विकास अच्छा होता है और अधिक उपज प्राप्त होती हैं। खस की पौध स्थापित होने के बाद समय-समय (4-5 माह के अंतराल में) पर पत्तियों की ट्रिमिंग (पत्तियों की छटाई जमीन से 30-50 से. मी. ऊपर में) करते रहना चाहिए, जिससे की फसल में अधिक से अधिक किल्ले/ शाखाएँ विकसित हों एवं अधिक से अधिक जड़ की उपज प्राप्त हो सकें।

खस के साथ अन्तर्वर्तीय फसलः प्रारम्भिक अवस्था में खस की वृद्धि बहुत धीरे रहती है, जिससे की खरपतवार आने की संभावना अधिक बनी रहती है इसलिए पौधों के बीच के खाली स्थान का प्रयोग कम समय मे तैयार होने वाली फसलों के लिए किया जा सकता हैं। जल्दी पकने वाली दलहनी फसल जैसे मूँग, उड़द, ग्वार फली एवं खरीफ में सब्जी वाली फसलें उगाई जा सकती है, जिससे प्रति इकाई उत्पादन मे वृद्धि होती हैं। दलहनी फसल के माध्यम से नत्रजन स्थरीकरण होता है एवं भूमि में पोषक तत्वों की मात्रा में बढ़ोत्तरी होती हैं।

कटाई एवं उपज

खस की कटाई का समय उसकी जड़ की उपज एवं तेल की गुडवत्ता को प्रभावित करता हैं। पौध रोपण के 15-24 महीने तक जड़ों की कटाई की जा सकती है परन्तु अच्छा गुडवत्ता का तेल प्राप्त करने के लिए 18 महीने बाद कटाई की जानी चाहिऐं यदि जड़ की कटाई अपरिपक्व अवस्था में की जाती है तो कम गुडवत्ता का तेल प्राप्त होता है एवं अतिपरिपक्व हो जाने पर तेल की मात्रा में कमी देखी जा सकती हैं। खस की पूर्ण विकसित जड़ों की कटाई के लिए दिसम्बर से फ़रवरी का महीना सर्वोत्तम माना जाता है क्योंकि इस समय मिट्टी मे नमी बनी रहती है, जिससे खुदाई करना आसान होता है एवं जड़ों को कम नुकसान होता हैं। खुदाई के लिए कुदाल का अथवा ट्रैक्टर द्वारा मोल्ड बोर्ड प्लॉउ का प्रयोग कर 35-45 से. मी. गहराई तक खुदाई के लिए किया जाता हैं।

खस की उपज उसकी कटाई का समय, मिट्टी की गुडवत्ता एवं प्रकार, तथा उसके किस्म पर निर्भर करती हैं। जड़ों की कटाई के पश्चात् साफ पनि से धुलते है, जिससे की मिट्टी को जड़ से अलग किया जा सकें। जड़ों की धुलाई करने के पश्चात् उसे छाँव में 1-2 दिन तक सुखाते हैं। जड़ों से तेल निकालने के लिए वाष्प आसवन विधि का प्रयोग किया जाता हैं। खस के तेल का उत्पादन 0.3-0.7 प्रतिशत या अधिकतम 1.00 प्रतिशत तक ही प्राप्त होती हैं। सामान्यतः खस की जड़ का उपज लगभग 15-20 क्विंटल एवं तेल की उपज 20-25 कि. ग्रा. प्रति हेक्टेर तक प्राप्त होती हैं। इसके तेल की माँग बाजार में वर्ष भर बनी रहती है एवं बाजार में तेल की अच्छी कीमत प्राप्त होती हैं। बाजार में खस के तेल का मूल्य उसके गुणवत्ता, प्रकार एवं उपलब्धता के अनुसार अलग-अलग मिलता हैं। भारत में खस के तेल का मूल्य 10,000 से 18,000 रुपये ली. तक प्राप्त हो सकता है जबकि अंतर्राष्ट्रीय बाजार मे इसके तेल की कीमत 25,000 रुपये ली. तक मिलती हैं।

खस के तेल का प्रयोग विभिन्न प्रकार की सुगंधित सामाग्री एवं औषधी के लिए किया जाता हैं। तेल का प्रयोग

सुगंध उद्योग मे प्रमुखतः से किया जाता है, साथ ही इसका उपयोग खाद्य पदार्थों के स्वाद अथवा सुगंध कारक के रूप मे भी किया जाता हैं।

खस की उपयोगिता

पशुओं के चारे के रूप में: खस घास की पत्तियों का उपयोग पशुओं के चारे के लिए किया जाता हैं। घास की नई-नई पत्तियाँ चारे के लिए उपयुक्त होती है, जिसे साबुत अथवा कुट्टी बनाकर भूसे के साथ भी दिया जा सकता हैं। पुरानी पत्तियों में सेल्यूलोस की मात्रा बढ़ जाती है और पत्तियाँ ज्यादा कड़ी हो जाती है, जिसको खाने में पशु कम रुचि दिखाते हैं।

औषधी के रूप में: प्राचीन काल से ही खस के तेल का प्रयोग विभिन्न प्रकार से औषधि के रूप में किया जाता रहा हैं। इसका प्रयोग सूजन कम करने, रोगाडू रोधक के रूप में, प्रति उपचायक के रूप में, स्नान, मालिश करने में, छाले में, बुखार इत्यादि मे किया जा सकता हैं।

सुगंधित सामग्री बनाने में: खस की खेती का प्रमुख उद्देश्य तेल उत्पादन ही होता है, क्योंकि इसका तेल खुशबूदार होने से बाजार मे इसकी अधिक माँग साल भर बनी रहती हैं। तेल का प्रयोग विभिन्न प्रकार के सुगंधित साबुन एवं शैम्पू बनाने में, लगाने वाले तेल के रूप में, इत्र के रूप में, अगरबत्तियों में एवं विभिन्न प्रकार के पेय पदार्थों जैसे शर्बत, लस्सी, शीतल पेय पदार्थ में सुगंध कारक के रूप में किया जाता हैं। जड़ों से तेल उत्पादन का प्रतिशत कम होने के कारण बाजार में तेल का अच्छा मूल्य प्राप्त होता है, जिससे किसान को अधिक आमदनी प्राप्त होती हैं।

सजावट के लिए

खस घास को सजावट के लिए भी प्रयोग किया जा सकता हैं। खस को गमलों, पाटरी या हैज, कूलिंग उपकरणों इत्यादि के रूम मे घरों की बॉउन्ड्री, उपहारों में, एवं बागानों में सहचर फसल के रूप मे भी प्रयोग किया जाता हैं।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

फलोद्यान से लंबे समय तक अधिक लाभ हेतु वैज्ञानिक ढंग से रेखांकन, नियोजन एवं प्रबंधन

रिद्धिमा त्रिपाठी[1] एवं विवेक कुमार त्रिपाठी[2*]

[1]उद्यान विज्ञान विभाग, शुआट्स, प्रयागराज

[2]उद्यान विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर

पत्राचारकर्ता: drvktripathicsa@gmail.com

परिचय

नया फलोद्यान तभी लंबे समय तक अधिक लाभ देने के साथ-साथ खूबसूरत भी होगा जब उद्यान का वैज्ञानिक ढंग से रेखांकन, नियोजन और कुशल प्रबंधन होगा। उद्यान के अन्दर जल निकास, सिंचाई एवं भंडारण की सुविधायें कम व्यय पर आसानी से उपलब्ध होना चाहिए। फलोद्यान का रोपण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके प्रारंभिक नियोजन एवं स्थापना में यदि कोई कमी रह जाती है तो उसके दुष्परिणाम बगीचें के रहने के जीवन पर्यंत भोगने पड़ते हैं। इसलिए प्रारंभ में ही सही रेखांकन एवं नियोजन करना अति आवश्यक एवं महत्वपूर्ण होता है।

सर्वप्रथम बगीचा लगाने के लिए ध्यान रखें कि जहाँ बगीचे का रोपण करना है, वहाँ पर 2 मीटर की गहराई तक कोई पत्थर आदि की कठोर पर्त न हो, उस जगह पर जलभराव न होता हो तथा मिट्टी अम्लीय या क्षारीय भी न हो, ऐसे क्षेत्र को आप आम, अमरूद, अनार, नीबू प्रजाति, लीची, बेर, बेल तथा आँवला आदि फलों का उद्यान रोपण हेतु चयन करें और साथ ही साथ उद्यान में सुरक्षा व सिंचाई एवं परिवहन के साधन की उचित व्यवस्था पूर्व से ही करें।

नये फलोद्यान हेतु वैज्ञानिक ढंग से नियोजन एवं रेखांकन

नए फलोद्यान की स्थापना के लिए निम्न बिंदुओं पर विशेष ध्यान देना चाहिए-

उद्यान के अन्दर जल निकास, सिंचाई, भंडारण की सुविधायें कम व्यय पर आसानी से उपलब्ध होना चाहिए।

बगीचे में विभिन्न सामग्री को ले जाने तथा बाद में उत्पादों को लाने जाने के लिए सड़क मार्ग से जुड़ा स्थान नये फलोद्यान लगाने के लिए सर्वोत्तम रहता है।

आवश्यकतानुसार सिंचाई के उचित साधन होने के साथ साथ विपरीत मौसम में जल निकास की उत्तम व्यवस्था होना जरूरी है।

पौधों की सिंचाई तथा अन्य कृषि क्रियायें सुगमता पूर्वक करने के लिए भूमि समतल होना चाहिए। विभिन्न औद्योगिक एवं कृषि क्रियायें सुगमता पूर्वक करने के लिए खंड निर्धारित करके विभिन्न प्रकार के फल वाले पौधे लगाना चाहिए।

लगाये जाने वाले फल पौधें का चयन मृदा के पी. एच. मान के अनुसार करना चाहिए।

दक्षिण-पश्चिम की ओर ऊँचे पौधे तथा बाद में छोटे आकार के वृक्ष बनने वाले पौधे लगाना अच्छा रहता है। एक समय में पकने वाले फलों को पास-पास के खंडों में लगाना चाहिए, जिससे फलों के पकने पर उनकी तुड़ाई एवं देखभाल सही ढंग से हो सके।

फल पौधे प्रजाति के अनुसार अनुकूल अंतर पर लगायें। सिंचाई नालियाँ ढाल के अनुसार इस प्रकार बनायें कि उनसे सिंचाई के साथ-साथ जल निकास का कार्य भी संपन्न हो सके ।

फलोद्यान में प्रयुक्त सड़कें पर्याप्त चौड़ी होनी चाहिए। फल बगीचे के कुल क्षेत्रफल का 10 प्रतिशत से अधिक भाग सड़कों, नालियों तथा भवन निर्माण आदि कार्यों में प्रयोग ना हो।

नये फलोद्यान रोपण हेतु प्रचलित वैज्ञानिक विधियाँ

वर्गाकार विधि: नये फलों का बगीचा लगाने में सर्वाधिक ऐसे में हटाना वर्गाकार विधि (सरल विधि) उपयोग में लायी जाती है। हेज तथा वायु वृति (विंडब्रेक) के पौधें की पंक्ति से लगभग आधी दूरी छोड़कर, रेखांकन का कार्य शुरू करना

ISSN No. 2583-3316

उचित रहता है, जिससे उनका प्रतिकूल प्रभाव फल वाले वृक्षों के ऊपर ना पड़े तथा उनके मध्य जुताई एवं अन्य कार्य आसानी से किये जा सके साथ ही चौकीदार को निगरानी रखने में भी आसानी रहे।

आयताकार विधि

इस विधि में पौधे से पौधे की दूरी लाइन से लाइन की दूरी से कम रहती है। इस विधि में बागवानी की सभी क्रियायें आसानी से की जा सकती हैं तथा पौधों को सूर्य का उचित प्रकाश मिलता रहता है। इसी कारण आयताकार विधि भी उत्तम मानी गयी है।

त्रिभुजाकार विधि

इस विधि के तहत भी पौधे वर्गाकार विधि की तरह ही रोपित किये जाते हैं। अंतर केवल इतना रहता है कि समान अंकों वाली कतारों के पौधे, असमान अंकों वाली कतारों के मध्य में लगाये जाते हैं। इस विधि में वृक्ष की जड़ों को वर्गाकार एवं आयताकार विधि की अपेक्षा अधिक स्थान में फैलने का मौका मिलता है, लेकिन वर्गाकार विधि की तुलना में 5 प्रतिशत पौधे कम रोपित होते हैं।

षष्ट भुजाकार विधि

इस विधि में षष्ट भुजाकार में छः वृक्ष लगाये जाते हैं और एक अन्य वृक्ष उसके केन्द्र में लगाया जाता है। इस विधि में वर्गाकार प्रणाली की अपेक्षा 15 प्रतिशत वृक्ष अधिक लगते हैं। यह विधि उन स्थानों में, जहाँ भूमि का मूल्य अधिक है तथा उर्वरा शक्ति उत्तम हैं, अधिक सफल रहती है। मध्य में लगाया गया पौधा अस्थाई होता है, जो कम समय में ही फलत देने लगता है और उसका जीवन काल भी कम समय का ही होता है।

पंचकोण विधि

इस विधि का रेखांकन वर्गाकार प्रणाली की तरह करते हैं। अंतर यह रहता है कि प्रत्येक वर्ग के केन्द्र में एक वृक्ष अधिक लगता है, जिसे पूरक वृक्ष कहते हैं। जब वृक्ष पूर्ण आकार ग्रहण करने लगे तो पूरक वृक्ष को हटा देते हैं। मध्य भाग में जहाँ पौध अस्थाई होता है, जो कम समय में ही फलत देने लगता है और उसका जीवन काल भी कम समय का ही होता है। इस विधि में वर्गाकार विधि की तुलना में लगभग दोगुने पौधे रोपित होते हैं।

कंटूर विधि

यह विधि पहाड़ में, ढालू खेतों में, ढाल के हिसाब से परि-रेखाओं में विभाजित कर प्रयोग में लेते हैं और उसके आधार पर ढाल के विपरीत दिशाओं में पौधों को लगाते हैं।

सीढ़ीनुमा विधि

इस विधि के तहत सीढ़ीनुमा स्थान विकसित किया जाता है। यह कंटूर विधि से आगे का रूप है। यदि ढाल अधिक तीव्र होता है, तो सीढ़ियों की चौड़ाई कम और कम ढ़ाल होने पर सीढ़ियों की चौड़ाई अधिक रखते हैं।

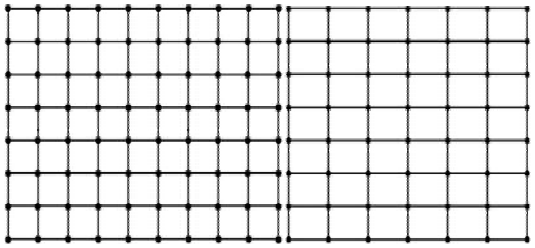

वर्गाकार विधि

आयताकार विधि

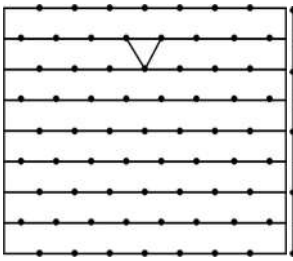

त्रिभुजाकार विधि

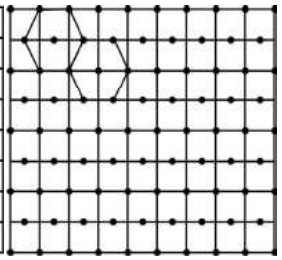

षष्ट भुजाकर विधि

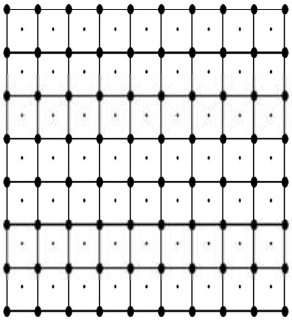

पंचकोण विधि

कंटूर विधि

गड्ढों की खुदाई-भराई एवं पौधों का चुनाव

रबी की फसल कटने के बाद, रोपड़ से एक डेढ़ माह पूर्व गड्ढे खोदने का कार्य कर लेना चाहिए ताकि खरपतवार, कीट, विषाणु आदि तेज धूप में नष्ट हो जायें। गड्ढों की खुदाई के समय धयान रखें कि ऊपर की आधी मिट्टी एक तरफ तथा नीचे की आधी मिट्टी दूसरी तरफ अलग रखें। इस प्रक्रिया के

ISSN No. 2583-3316

बाद गड्ढों में सड़ी गोबर की खाद, बड़े वृक्षों के गड्ढों में 20-25 किग्रा. खाद व मध्यम आकार वालों में 15-20 किग्रा. व अन्य छोटे आकार वाले वृक्षों में 5-10 किग्रा. खाद व गड्ढे की ऊपर वाली आधी मिट्टी एवं 0.5 किग्रा. नीम की खली दीमक बचाव के लिए प्रति गड्ढा 15-20 सेमी ऊपर तक भर देना चाहिए। वर्षा ऋतु में दो-तीन अच्छी बारिश के बाद अच्छी गुणवत्ता वाले वृक्ष लगाना चाहिए। पौधे खरीदते समय ध्यान दें कि पौधे एक से डेढ़ वर्ष पुराने ही हो, ज्यादा पुराने पौधें का चुनाव नहीं करना चाहिए एवं पौध रोग रहित होना चाहिए।

नये फलोद्यान हेतु विभिन्न फल पौधे और उपयुक्त प्रजातियाँ

विभिन्न फलों जैसे आम की दशहरी, लंगड़ा, चौसा, बॉम्बेग्रीन, आम्रपाली, अम्बिका, पूसा अरूणिमा तथा मल्लिका, आदि, अमरूद की लखनऊ-49, इलाहाबाद सफेदा, रेड फ्लेश्ड, एपल कलर, बनारसी सुर्खा, चित्तीदार, बेदाना, ललित तथा संगम, आदि, अनार की अलान्डी, ढोलका, जोधपुरी रेड, काबुल, पेपर सेल, गणेश, जी-137, मृदुला, ज्योति तथा रुबी आदि, नीबू प्रजाति की कागजी नीबू, प्रमालिनी, विक्रम, सीडलेस नीबू, पूसा उदित, ब्लडरेड, मोसम्बी, सतगुदी तथा किन्नों आदि, लीची में गुलाबी, देहरा रोज, कलकतिया, लेटसीडलेस तथा रोज सेन्टेड आदि, बेर में बनारसी कड़ाका, बनारसी पैबन्दी, जोगिया, पोंडा, नाजुक, सानौर-1 तथा अलीगंज, आदि, बेल में नरेन्द्र बेल 7, नरेन्द्र बेल 9, ईटावा कागजी तथा मिर्जापुरी आदि, तथा आँवला में बनारसी, कृष्णा, एन. ए. 9., एन. ए. 10., कंचन, चकैया, बलवन्त ऑवला तथा लक्ष्मी 52 आदि का प्रयोग रोपड़ में कर सकते हैं।

नए बगीचे में विभिन्न फल पौधों का रोपण अंतराल

फल वृक्ष	पौधे से पौधे की दूरी (रोपण अंतराल)
अमरूद	6 x 6, 3 x 3
बेर	6 x 6
बेल	8 x 8
नीबू प्रजाति	6 x 6
आम	10 x 10, 2.5 x 2.5
लीची	10 x 10
आँवला	10 x 10
अनार	6 x 6

नये पौधों के रोपण में विशेष सावधानियाँ

पौधों को अच्छी तरह से गड्ढे भरने के बाद, गड्ढे के बीचों-बीच में रोपित करना चाहिए तथा पौध लगाने के बाद पौधें के आस-पास की मिट्टी को खुर्पी द्वारा अच्छी तरह से दबा देना चाहिए। पौधों को बगीचे में उतनी ही गहराई तक लगाया जाए, जितना गहरा पौध पौधशाला में लगा हुआ था और पौध हमेशा सीधा लगाना चाहिए। यदि पौधे का तना कमजोर है तो उसको किसी लकड़ी आदि से हल्का सहारा अवश्य देना चाहिए। पौधों को हमेशा सायंकाल में ही रोपना चाहिए तथा पौधों को लगाने के समय घासपात या पुआल से लिपटे हिस्से को इस प्रकार अलग करें ताकि रोपण किये हुए हुए पौधों की पिण्डी को किसी प्रकार की क्षति न हो। पौध रोपण के तुरंत बाद हल्की सिंचाई करना अति आवश्यक होता है, जिससे जड़ों का, बगीचे की मिट्टी से सीधा पौधों में संपर्क स्थापित हो जाता है। इसके बाद पौधें की समय-समय पर निराई एवं हल्की गुड़ाई, प्रत्येक सिंचाई के बाद करते रहना चाहिए। धयान रखें कि उन पर किसी प्रकार की बीमारी तथा कीड़ों आदि का प्रकोप ना हो। यदि किसी बीमारी के लक्षण या कीड़ों मकोड़ों का आक्रमण दिखाई पड़े, तो तुरंत ही उचित रसायन या कवकनाशी का प्रयोग करके उनको नियंत्रित करना चाहिए।

ISSN No. 2583-3316

रोपण के उपरान्त वैज्ञानिक प्रबंधन

जुलाई-अगस्त में पौध रोपण करने के कुछ माह बाद ही शरद ऋतु आ जाती है। उस समय इन नए रोपित पौधों को मौसम के विपरीत प्रभाव से बचाना अति आवश्यक होता है। इसके लिए पौधे के आसपास तीन लकड़ियां लगाकर उस पर टाट इस प्रकार से लगाते हैं कि पूर्व की दिशा खुली रहे और अन्य दिशाओं से हवा ना आने पाए।

पौधें के पास चार लकड़ियाँ लगाकर, पौधे की ऊँचाई से 25 से 30 सेंटीमीटर ऊपर घास-फूस या पुआल रखकर भी पौधे को बचाया जा सकता है। बगीचे में पहुँचकर कर रात्रि के समय हल्का धुआँ करने से भी वातावरण के तापमान को बढ़ाकर पौधें को विपरीत मौसम से बचाया जा सकता है।

नये बागों में अंत:सस्यन

जो बगीचा आप रोपित कर रहे हैं, उससे प्रारंभ में दलहनी फसलों में उर्द, चना, मूँग, एवं लोबिया, सब्जियों में टमाटर, बैंगन, मिर्च, फूलगोभी, पातगोभी या कद्दूकुल की सब्जियां, फूल वाले पौधें में गेंदा, गैलार्डिया, ग्लेडियोलस, आदि तथा फल वाले पौधों में पपीता, फालसा, रसभरी या स्ट्रॉबेरी को उगाकर अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है और इनसे खरपतवार भी नियंत्रित रहते हैं। ध्यान यह रखना चाहिए कि अंतः सस्यन के रूप में उगाई जाने वाली फसल, मुख्य फसल पर लगने वाले कीड़ों मकोड़ों एवं बीमारियों को आश्रय ना देती हों, तथा उनकी जल की माँग भी मुख्य फसल की भांति ही हो। इस प्रकार अंतः सस्यन में उगाई गई फसल को अलग से संस्तुत मात्रा में खाद एवं उर्वरक भी देना अति आवश्यक होता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार से वैज्ञानिक ढंग से रेखांकन, नियोजनतथा रोपण करके और उसके बाद उचित वैज्ञानिक तकनीक अपनाते हुए प्रबंधन करके नये बगीचे से भविष्य में लंबे समय तक अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

कृषि के लिए महत्वपूर्ण मृदा परीक्षण

खलील खाँन[1]* एवं गौरव शुक्ला[2]

[1]मृदा विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान केन्द्र दलीप नगर, कानपुर देहात

[2]मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन मेजर एस. डी. सिंह पोस्ट ग्रेजुएट कालेज, फर्रूखाबाद

पत्राचारकर्ता: khankhali64@gmail.com

परिचय

कृषि उत्पादन के निवेशों में उर्वरकों का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि रासायनिक उर्वरकों की कीमत में लगातार वृद्धि हो रही है। इसलिए किसानों को जरूरत से अधिक रासायनिक उर्वरक नहीं डालना चाहिए, जिससे खेती की लागत भी न बढ़े और साथ ही साथ पोषक तत्वों का असन्तुलन भी न हो। इसलिए वर्तमान समय में उर्वरकों की माँग एवं मूल्यों को ध्यान में रखते हुए यह जरूरी हो गया है कि फसल बोने से पहले ही उर्वरकों की दी जाने वाली कुल मात्रा का निर्धारण कर लें। कौन-कौन से उर्वरक कितनी मात्रा में डालने चाहिए, इसके लिए जरूरी है कि फसल बोने से पूर्व मृदा परीक्षण अवश्य करा लें।

मृदा परीक्षण कब

मृदा परीक्षण फसल बोने से पहले और फसल की कटाई के बाद खाली खेत की मिट्टी की ही करना चाहिए। खेत की तैयारी के समय ही खाली खेत से मिट्टी निकाल कर सूखा कर प्रयोगशाला में मृदा नमूना देकर जाँच करवानी चाहिए। यदि फसल की कटाई होने वाली हो तो खड़ी फसल से कतारों के बीच की मिट्टी निकालना आसान रहता है और समय की बचत भी होती है, जिससे ली जाने वाली फसल के लिए आवश्यक पोषक तत्वों एवं मृदा में उपलब्ध तत्वों की पूर्ति की क्षमता का निर्धारण बोने के समय तक हो जाता है और आवश्यक उर्वरकों को सही मात्रा की समयानुसार पूर्ति भी हो जाती है।

मृदा परीक्षण क्यों

मृदा परीक्षण से मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा का सही-सही निर्धारण हो जाता है, जिससे आगामी फसल में दी जाने वाली उर्वरकों की संतुलित मात्रा की जानकारी हो जाती है। इस प्रकार विभिन्न फसलों की दृष्टि से पोषक तत्वों की कमी का ज्ञान होने पर आर्थिक दृष्टि से उपयुक्त उर्वरकों की संस्तुति की जाती है और साथ ही साथ मृदा सुधारक पदार्थों की सहायता से मृदा की दशा में सुधार किया जाता है। मृदा परीक्षण से मृदा सुधारक पदार्थों की मात्रा का भी ज्ञान हो जाता है।

खेत से मृदा नमूना लेने की विधि

मृदा परीक्षण के लिए किसी भी खेत से लिया गया नमूना उस सारे खेत का प्रतिनिधि नमूना होता है। इसलिए पूरे खेत का एकमात्र मृदा नमूना सूखा और लगभग मृदा 500 ग्राम होना चाहिए। मृदा नमूना से एकत्रित करने का ढंग मृदा परीक्षण में विशेष स्थान रखता है, जिसका परीक्षण करके उर्वरकों की मात्रा का निर्धारण किया जाता है। इसलिए सामान्य फसलों के लिए मृदा नमूना निम्न विधि से लेना चाहिए।

क. मृदा नमूना जिस खेत से भी लेना हो, उस खेत को सबसे पहले खेत के ढाल, मृदा का रंग, सरंचना ली गई फसल और उपज आदि बातों को ध्यान में रखकर अलग-अलग भागों में बाँट देना चाहिए। बाद में प्रत्येक भाग से अलग-अलग नमूना लेना चाहिए।

ख. प्रत्येक भाग के ऊपरी सतह से घास-फूंस, कंकड़-पत्थर आदि साफ करे, एक V प्रकार का 15 सेमी. की गहराई तक गड्ढ़ा बना लें। फिर गड्ढ़े की फालतू मिट्टी निकाल कर एक तरफ से खुरपी या फावड़े की सहायता से ऊपर से नीचे तक 2-3 सेमी मोटी मिट्टी की परत खुरच कर निकाल लें।

ग. इस प्रकार एक खेत से एक जैसी मिट्टी वाले 5-6 गड्ढ़े से मिट्टी लेकर एक कागज/ट्रे/बर्तन/प्लास्टिक सीट पर लेकर सब नमूनों को बारीक करके आपस में अच्छी तरह से मिला लें तथा घास-फूंस, जड़े, कंकड़-पत्थर निकाल दें।

घ. एकत्रित की गई मिट्टी को छाया में सुखाकर लगभग (500 ग्राम) तक कम करना चाहिए।

ङ. कम करने के लिए किसी कागज पर गोल फैलाकर चार भागों में बाँट लें फिर आमने-सामने के दो भाग हटाकर शेष मिट्टी को मिलाकर फिर गोल फैला लें और दुबारा उपरोक्त

ISSN No. 2583-3316

क्रिया को तब तक दोहराये जब तक कि मिट्टी का कुल नमूना लगभग 500 ग्राम मिट्टी का न रह जाये। इस प्रकार मृदा नमूने को प्रतिनिधि मृदा नमूना कहते हैं।

च. उपरोक्त क्रिया द्वारा ली गई 500 ग्राम मिट्टी को किसी पोलीथीन या कपड़े की थैली में भरकर बाँध देना चाहिए, पहचान के लिए एक मोटे कागज की पर्ची सहित इस नमूने को दूसरी कपड़े की थैली में रख दें और दूसरा लेबल थैली के ऊपर बांध देना चाहिए, जिससे रिपोर्ट प्राप्त होने पर आप जान सकें कि किस खेत की कौन-सी रिपोर्ट है।

छ. सूचना कार्ड/पर्ची पर निम्न विवरण लिखा होना चाहिए।

- किसान का नाम एवं पिता का नाम
- खेत का नम्बर या पहचान
- ग्राम का नाम
- जिला का नाम
- पिछली फसल का नाम
- ली जाने वाली फसल का नाम

मृदा नमूना लेते समय सावधानियाँ

क. जहाँ तक सम्भव हो गीली मिट्टी का नमूना नहीं लेना चाहिए। यदि लेना आवश्यक हो तो मिट्टी को छाया में सुखाकर ही प्रयोगशाला भेजें।

ख. जहाँ तक सम्भव हो तो खड़ी फसल से भी नमूना न लें, यदि लेना आवश्यक हो तो कतारों के बीच से लें, जिससे उर्वरक या जैविक खाद 30-40 दिन पहले तक न डाला गया हो।

ग. अलग-अलग खेतों से या मृदा की किस्म अलग-अलग होने पर मृदा नमूना भी अलग-अलग एकत्र करने चाहिए।

घ. मृदा नमूना, सड़क किनारे तथा नाली व पेड़ के पास या खाद डाले गये स्थान से नहीं लेना चाहिए।

ङ. ऊँचाई वाले खेत के लिये नमूना अलग ढंग से लें। ऊँचाई भूमि वाले खेतों की मिट्टी का नमूना 100 सेमी, गहराई तक लेना चाहिए। नमूना लेने के लिए भूमि की सतह पर लवण की पपड़ी को खुरच कर अलग नमूने के तौर पर रख लें फिर 0-15, 15-30, 30-60 और 60-100 सेमी, गहराई से अलग-अलग नमूने ले लें और अलग-अलग थैलियों में डालकर प्रयोगशाला में भेजनी चाहिए।

च. बागवानी के लिए मृदा नमूना 2 मीटर की गहराई तक लेने चाहिए क्योंकि पेड़ों की जड़े भूमि में कोई सख्त पर्त या पत्थर आदि की समस्या न हो। इसलिए मृदा नमूने लगभग 500 ग्राम के अलग-अलग गहराई जैसे 0-15, 15-45, 45-90, 90-150, 150-200 सेमी., तक लेकर अलग-अलग थैलियों में डालकर सूचना कार्ड लगाकर प्रयोगशाला में भेजना चाहिए।

छ. नमूनों को खाद के बोरों, ट्रैक्टर की बैटरी, डीजल या अन्य किसी रसायन आदि से दूर रखें।

ज. फसल की बुवाई से लगभग एक माह पहले ही मृदा नमूने परीक्षण के लिए प्रयोगशाला में भेज देने चाहिए।

उर्वरकों की मात्रा का निर्धारण

प्रयोगशाला में उपरोक्त विधि से लिए गये मृदा नमूने को निश्चित माप के छिद्रों वाली छलनी से छानकर परीक्षण हेतु तैयार करके, पी.एच., विद्युत चालकता, जीवांश कार्बन प्रतिशत उपलब्ध फास्फेट एवं पोटाश की मात्रा का परीक्षण करते हैं। परीक्षण से प्राप्त आंकड़ों को निम्न, मध्यम एवं उच्च वर्गों में सुनियोजित करके निर्धारित सीमाओं के आधार पर उर्वरकों व मृदा सुधारकों की मात्रा की संस्तुति की जाती है। आमतौर पर प्रयोगशालाओं में आकड़ों को निम्न श्रेणी में रखा जाता है।

मृदा सुधारकों के लिए

पी. एच. मान			विद्युत चालकता		
अम्लीय	सामान्य	क्षारीय	सामान्य	क्रान्तिक	हानिकारक
6.5 से कम	6.6 से 8.0 तक	8.0 से अधिक	1.00 तक	1.0 से 3.0 तक	3.0 से अधिक

मृदा परीक्षण के आधार पर उपलब्ध तत्वों की श्रेणियाँ

श्रेणी	जीवंश कार्बन (प्रतिशत)	उपलब्ध फस्फोरस (किग्रा/हे.)	उपलब्ध पोटाश (किग्रा/हे.)
1. अति न्यूनतम	0.0 से 0.20 तक	0.0 से 10.0 तक	0 से 50 तक
2. न्यून	0.21 से 0.50 तक	10.0 से 20.0 तक	51 से 100
3. मध्यम	0.51 से 0.80 तक	21.0 से 40.0 तक	101 से 250
4. उच्च	0.80 से अधिक	40.0 से अधिक	250 से अधिक

ISSN No. 2583-3316

उत्तर प्रदेश की मुख्य फसलों के उर्वरकों की मात्रा (किग्रा./हे.)

क्र.सं.	फसलों के नाम (किग्रा./हे.)	मुख्य पोषक तत्वों एन.पी.के. किग्रा./हे.			की मात्रा (12:32:16)
		नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटाश	
1.	गेहूँ	150	80	50	250
2.	आलू	150	100	100	310
3.	सरसों	150	75	75	335
4.	चना/मटर	20	60	40	188
5.	गन्ना	150	75	75	135
6.	मक्का	150	75	60	135
7.	धान	150	75	60	1
8.	बैंगन/फल गोभी	120	80	40	250
9.	प्याज	100	50	50	156

प्रमुख रासायनिक उर्वरक एवं उनमें पाये जाने वाले तत्वों का प्रतिशत

क्र. सं	उर्वरक का नाम	तत्व प्रतिशत				
		नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटाश	जिंक	सल्फर
1.	यूरिया	46	-	-	-	-
2.	कैल्शियम अमोनियम नाट्रेट	25	-	-	-	-
3.	एमानियम सल्फेट	20.6	-	-	-	23
4.	सिंगिल सुपर फास्फेट	-	16	-	-	11
5.	म्यूरियेट ऑफ पोटाश	-	-	60	-	-
6.	डाइअमोनियम फास्फेट	18	46	-	-	-
7.	एन.पी.के.	15	15	15	-	-
8.	एन.पी.के.	12	32	16	-	-
9.	एन.पी. (कम्पलेक्स)	20	20	-	-	-
10.	राक फास्फेट	-	18	-	-	-
11.	जिंक सल्फेट	-	-	-	21	-
12.	चिलेटेड जिंक	-	-	-	12	-

ISSN No. 2583-3316

प्रमुख उर्वरकों का एक किलोग्राम तत्व के लिए उर्वरक मात्रा किलोग्राम

क्र. सं	उर्वरक का नाम	तत्व प्रतिशत				
		नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटाश	जिंक	सल्फर
1.	यूरिया	2.2	-	-	-	-
2.	कैल्शियम , अमोनियम नाइट्रेट	4.0	-	-	-	-
3.	अमोनियम सल्फेट	5.0	-	-	-	4.40
4.	सिंगल सुपर फास्फेट	-	6.25	-	-	9.00
5.	म्यूरियेट ऑफ पोटाश	-	-	1.7	-	-
6.	डाइअमोनिया फास्फेट	5.5	2.2	-	-	-
7.	एन.पी.के.	8.3	3.8	6.25	-	-
8.	एन.पी (कम्पलेक्स)	5.5	5.0	-	-	-
9.	राक फास्फेट	-	6.0	-	-	-
10.	जिंक सल्फेट	-	-	-	5.0	10.0
11.	चिलेटेड जिंक	-	-	-	8.0	

❖❖

ISSN No. 2583-3316

वैज्ञानिक तरीके से करें आंवला की खेती

आनंद साहिल[1]*, शीतल रावत[2], लोकेश कुमार[3] एवं शिवानी यादव[4]

[1]युवापेशेवर-1 के. शु. बा. सं., बीकानेर, [2]युवापेशेवर-2 के. शु. बा. सं., बीकानेर

[3]वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता के. शु. बा. सं., बीकानेर, [4]बागवानी बुंदेलखंड यूनिवर्सिटी, झाँसी

पत्राचारकर्ता: anandmaharana19981998@gmail.com

परिचय

आंवला का वैज्ञानिक नाम *इम्बलिका ओफिसिनेलिस* है, जो कि यूफोरबिएसी कुल के अंतर्गत आता है। आंवला को 21वी. सदी के फल, इंडियन गूसबेरी एवं इसके औषधीय गुणों व पोषक तत्तवों से भरपूर होने के कारण इसे ''अमृतफल'' के नाम से भी जाना जाता है। आंवला का जन्म स्थल मध्य से दक्षिण भारत को माना जाता है। आंवला के पौधे समान्यतः उष्णकटिबंधीय एवं शुष्क उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों की जलवायु मे अधिक पनपते है। यह समान्यतः उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों मे सदाबहार जबकि उपोष्णकटिबंधीय में पर्णपाती प्रकृति के होते है। वेदों के अनुसार आँवले मे भगवान विष्णु का स्वरूप एवं समस्त देवी-देवताओं का निवास स्थान माना जाता है, जिससे पूरे भारतवर्ष के अधिकांश घरों मे इसके पौधे को लगाया जाता है। इसकी गहरी जड़ प्रणाली, कम पर्ण समूह और निषेचित फलों की सुप्तता के कारण शुष्क और अर्ध शुष्क जलवायु के लिए आदर्श पौध माना जाता है। आंवले के फल अन्य फलों की तुलना मे विटामिन सी (600 मिली ग्राम प्रति 100 ग्राम) के अच्छे स्त्रोत होते हैं। परिपक्व अवस्था में अधिकतम विटामिन सी से भरपूर आँवला में जीवाणुरोधी और एंटीओक्सीडेंट गुण होते है, जो कि शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को बेहतर बनाने में कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित एवं सफेद रक्त कोशिकाओं को बढ़ाने का काम करते है। साथ ही शरीर से विषाक्त पदार्थों को बाहर निकालने में मदद भी करते है। आयुर्वेदिक औषधि बनाने हेतु परिपक्व फलों और उसके बीजों का भी का उपयोग करते है। आंवले के फलों को विभिन्न आकार के अनुसार छाँटकर अलग-अलग उत्पाद जैसे च्यवनप्राश और त्रिफला हेतु छोटे आकार के फल एवं कैंडी, मुरब्बा और अन्य संरक्षित उत्पाद बनाने हेतु बड़े आकार के फल का प्रयोग करते है। विषम परिस्थितियों में ज्यादातर पौधे वृद्धि नहीं करते किन्तु आंवला के पौधे मुख्य रूप से अपनी विशेषताओ जैसे जल जमाव, सूखे वातावरण के प्रति सहनशीलता, विभिन्न प्रकार की बंजर भूमि हेतु उपयुक्तता, ठंड के तापमान के साथ-साथ उच्च तापमान 46 डिग्रीसेल्सियस तक सहनशीलता, प्रति इकाई अधिक उत्पादन एवं उत्पादकता, पोषक तत्वों एवं औषधिय गुणों से भरपूर होने के कारण इसकी उष्णकटिबंधीय एवं शुष्क उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में खेती लाभदायक है।

आंवले का बाग

आंवले का फलों से लदापेड़

ISSN No. 2583-3316

भूमि

आंवले की खेती मुख्य रूप से शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। आंवले की खेती किसी भी प्रकार की भूमि में आसानी से की जा सकती है, परन्तु उपर्युक्त जल निकास और जीवांस्मयुक्त युक्त गहरी बलुई दोमट भूमि उत्पादन के लिए उपर्युक्त मानी गई है। इसकी खेती मुखतः अन्य भूमि जैसे ऊसर, रेताल, बंजर, एव प्रायप्त सिंचाई सुविधायुक्त क्षारीय मृदा में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। खेती के लिए मुख्य रूप से मृदा का पी. एच. 6.5-9.5 उपयुक्त माना जाता है। आजकल इसका प्रयोग खेतों के मेड़ों पर, नदी, तालाबों के किनारे वायुरोधी पट्टी के रूप में, खेतों में अंतःस्यन के रूप एवं मुख्य फसलों के रूप में भी किया जाता है।

जलवायु

आंवला एक उपोष्ण जलवायु का पौध है परन्तु इसकी खेती उष्ण जलवायु युक्त प्रदेशों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। यह उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में सदाबहार जबकि उपोष्णकटिबंधीय में पर्णपाती प्रकृति के होते है। अन्य पौधे की तुलना में यह अधिक सूखारोधी, ताप सहिष्णु (4 से 46 डिग्री सेल्सियस) होते है। मुख्यतः दिसंबर से फरवरी माह में इसकी पत्तियाँ गिरकर उपर्युक्त समय आते ही नयी पत्तियाँ लग आती है।

प्रवर्धन

आंवले की नई-नई किस्मों एवं गुणवत्ता पूर्ण पौधे तैयार करने हेतु विभिन्न विधियों का प्रयोग करते है। आंवले का प्रवर्धन मुख्य रूप से बीजों के द्वारा किया जा सकता है। बीज बोने हेतु पिछले वर्ष पूर्ण परिपक्व फलों से प्राप्त बीजो का प्रयोग करते है। बीज बोने के लिए भूमि की सतह पर 15-20 से.मी. ऊँची 3 मी. लंबी क्यारियाँ बनाकर मार्च के माह में बीजो को फफूँदनाशक जैसे बाविस्टीन, मानेब आदि का प्रयोग कर बोना चाहिए। आँवले में शीघ्र अंकुरण हेतु वृद्धि नियंत्रक हार्मोन जैसे जिब्रेलिक एसिड 500 पी. पी. एम. से बीजों को उपचारित करके बुवाई करना चाहिए। अंकुरित पौधें को लगभग एक माह बाद समतल क्यारियों में 20 x 30 से. मी. दूरी पर या पॉलिथीन की थैलियों में मिट्टी एवं कम्पोस्ट (1:1) को भरकर लगाने के पश्चात् हल्की सिंचाई कर देना चाहिए। परन्तु फल की उत्पत्ति में विविधता एवं फल लगने में विलंब होने के कारण यह पद्धति सिर्फ अच्छे मूलवृंत प्राप्त करने हेतु प्रयोग करनी चाहिए। आँवले का प्रवर्धन वानस्पति विधि से सफलतापूर्वक किया जाता है, जिसके लिए एक वर्ष के मूलवृंत पर मई-जून माह में पैच विधि से कलिकायन करना चाहिए। कलिका को मुख्य रूप से 1-2 माह की शाख से लेना चाहिए तथा मूलवृंत पर सावधानी पूर्वक लगाना चाहिए। व्यवसायिक तौर पर सोफ्ट वुड ग्राफ्टिंग विधि से आंवला पौधे को तैयार किया जाता है।

किस्में

आंवला के अधिक उत्पादन के लिए अच्छी किस्मों का चयन अत्यंत आवश्यक है। आंवले की उन्नत किस्में जैसे एन.ए.-6, एन.ए.-7,एन.ए.-8,एन.ए.-9, आनंद-1,आनंद-2,एन.ए.-10, एन.ए.-4, बनारसी, चकैया आदि है। बनारसी एवं चकैया जैसी किस्मों की खेती मुख्य रूप से मुरब्बा बनाने हेतु की जाती है। परंतु शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों हेतु एन.ए.-7, आनंद-2 जैसी किस्में व्यावसायिक तरीके से खेती करने के लिए उपयुक्त हैं।

पौध रोपण

आंवले का बगीचा लगाने से पूर्व भूमि का चयन कर पौधे लगाने के स्थान को चिन्हित करना चाहिए। पौध रोपण के लिए वर्षा से एक माह पूर्व 1 मी. x 1मी. x 1मी. के आकार का गड्ढा कर मिट्टी एवं पूर्णतः सड़ी हुई गोबर की खाद (1:1) एवं कीटनाशी के हेतु थेमेट 10-20 ग्राम प्रति गड्ढा से भर देना चाहिए। पौधे से पौधे की एवं कतार से कतार की दूरी मुख्यतः 8 x 8 मीटर रखना चाहिए। आंवले का पौध मुख्यतः बारिश के समय (जुलाई-अगस्त) माह में लगाने से शतप्रतिशत पौधे के सफल होने की संभावना होती है।

विभिन्न प्रकार की पद्धतियाँ

वर्गाकार पद्धति

इस पद्धति में कतार से कतार की दूरी 8 मीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 8 मीटर रखते है। यह एक पुरानी पद्धति है। इस विधि द्वारा पौधे रोपण करने से पौधे को प्रकाश एवं वायु का संचार उचित मिलने से अपेक्षाकृत उत्पादन भी अधिक होता है। इस विधि से पौधे लगाने से इसकी बढ़वार भी अच्छी होती है एवं इसमे प्रति इकाई कम पौधे होते है।

आयताकार पद्धति

इस पद्धति में समान्यतः कतार से कतार की दूरी 10 मीटर एवं पौधे से पौधे की दूरी 5 मीटर रखते है। इस विधि से पौधे लगाने पर वर्गाकार विधि के द्वारा लगाने की अपेक्षा दोगुना पौधे लगा सकते है। इस विधि के द्वारा पौधे से पौधे की

ISSN No. 2583-3316

दूरी कम रखते है ताकि जब तक पौधे बड़े न हो तब तक उससे फल आसानी से लिया जा सके एवं पौधे जब पूर्णतः बड़े हो जाते है तो बीच के पौधे को निकाल कर पौधे से पौधे की दूरी 10 मीटर कर दिया जाता है।

दोहरी कतार पद्धति

इस विधि से पौधे लगाने से वर्गाकार विधि के अपेक्षा ढाई गुना पौधे प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक आते है। इस विधि में मुख्य रूप से दो कतार की दूरी 5 मीटर रखते है एवं उस कतारों में पौधें को 5 x 5 मीटर की दूरी पर लगते है। उसके बाद फिर दो कतारे 10 मीटर के बाद लगाते है।

सघन बागवानी

इस विधि का मुख्य उद्देश्य प्रति इकाई क्षेत्र में पोषक तत्वों, प्रकाश का समुचित उपयोग कर अधिक से अधिक उत्पादन वृद्धि के साथ-साथ ज्यादा मूल्योपार्जन करना है। सघन बागवानी में मुख्यतः विभिन्न पद्धतियाँ जैसे वर्गाकार कतार, दो कतार, गुच्छा विधि को अपनाकर पौधे लगा सकते है। व्यवसायिक तौर पर इस विधि से प्रति हेक्टर क्षेत्र में130-150 पौधे आसानी से लगायें जा सकते है। शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में इस विधि के द्वारा पौधे लगाकर प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक से अधिक आमदनी अर्जित कर सकते है।

खाद एवं उर्वरक का प्रयोग

खाद की मात्रा मुख्यतः भूमि की उर्वराशक्ति एवं पौधें की आयु पर निर्भर करती है। एक साल पुराने पौधे के लिए सामान्य रूप से 5-10 कि. ग्रा. पूर्णतः सड़ी हुई गोबर की खाद, 100 ग्रा. नाइट्रोजन, 50 ग्रा. फॉस्फोरस, 50 ग्रा. पोटाश देने के पश्चात् सिंचाई करनी चाहिए। इसके बाद प्रति पौध प्रति वर्ष इस खाद की मात्रा पौधे के आयु के अनुसार समान गुणित अनुपात में बढ़ाना चाहिए। खाद मुख्य रूप से फूल आने से पहले देने से फूल अच्छे आते है एवं फल का आकार बड़ा होता है। अच्छे वृद्धि एवं गुणवत्तापूर्ण फलो की प्राप्ति हेतु इन खादों के साथ-साथ जैविक खाद का भी प्रयोग करना चाहिए ताकि बाजार में इसका मूल्य अधिक मिल सके।

सिंचाई

सिंचाई समान्यतः पौधें की अच्छी वृद्धि एवं विकास के लिए समय-समय पर करते रहना चाहिए। पूर्णतः विकसित पौधे को अधिक सिंचाई कि जरूरत नही होती परंतु नये पौधे लगाने के पश्चात एक माह तक 5-10 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करने से पौधे आसानी से वृद्धि करते है। अर्धशुष्क क्षेत्र में विकसित पौधे को ग्रीष्म ऋतु के अच्छे वृद्धि विकास एवं गुणवत्तायुक्त फलो की प्राप्ति हेतु फूल आने से पहले एवं फल विकास के दौरान जुलाई-अक्टूबर के दौरान सिंचाई करते रहना चाहिए।

पलवार

सूखा प्रभावित क्षेत्रों में पौधे के थाले को सिंचाई पश्चात् अथवा वर्षा के अन्त समय में तने के चारों ओर वर्गाकार थाले में कार्बनिक (धन का पुवाल, घास कि पुवाल, मक्के का डंठल आदि) और अकार्बनिक (काली प्लास्टिक) पदार्थो का प्रयोग करते हुए 20 से.मी. तक आच्छाधित करना चाहिए जिससे भूमि में नमी बरकरार रहती है। साथ-ही-साथ पोषक तत्वो, केचुआ और सूक्ष्म जीवों की मात्रा में बढ़ोतरी होती है, जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति बनी रहती है एवं भूमि कि अन्य लक्षणिकतायें जैसे पी.एच., ई.सी. में सुधर तथा तापमान भी नियंत्रित रहता है। जिससे पौधें का विकास अच्छा होता है एवं अधिक समय तक पलवार

घास की पुवाल से पलवार

काली प्लास्टिक से पलवार

ISSN No. 2583-3316

अन्तः फसलें

आँवले के बगीचे में मुख्य रूप से दो कतारों के बीच के खाली स्थान में समय-समय पर जैसे जायद, खरीफ एवं रबी के समय विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ जैसे कद्दूवर्गीय (कद्दू, लौकी, खीरा, करेला), गोभी वर्गीय (पत्ता गोभी, फूल गोभी, गांठ गोभी) एवं अन्य सब्जियाँ जैसे भिंडी, गुवार इत्यादि लगाकर अपनी आमदनी में वृद्धि कर सकते है। अन्तः फसल के रूप में लगी सब्जियों की सिंचाई टपक सिंचाई विधि से करना चाहिए ताकि पानी की बचत के साथ-साथ मुख्य फसले प्रभावितना होती रहे।

आँवले से लदे वृक्ष

शाख तुराई उपरांत आँवलें

फलन एवं उपज

पौधें का फलन मुख्य रूप से उसकी किस्मों, जलवायु एवं उचित प्रबंधन पर निर्भर करता है। वनस्पतिक विधि द्वारा विकसित पौध समान्यतः 2-3 साल के बाद फल देना शुरू कर देता है, जबकि बीजू पौध मुख्यतः 8-10 साल बाद फल देना शुरू करता है। अर्धशुष्क क्षेत्रों में एक विकसित पेड़ 10-11 साल से 80-150 कि. ग्रा. तक फल उत्पादित किए जाते है।

कीट एवं रोग प्रबंधन

आंवले के पौधे में बहुत ही कम कीट एवं रोग का प्रकोप होता है।

छाल खाने वाला कीट (*इंडरबेला टेराओनीस*)

इस प्रकार के कीट समान्यतः वृक्ष के तने और डालियों में छिद्र बनाते है और धीरे-धीरे कर पूरे भाग को नुकसान करते है। इस प्रकार प्रभावित डालियाँ सूख जाती है। अतः इसके नियंत्रण हेतु छिद्रों को किरोसिन या डायक्लोरोवोस कीटनाशी के घोल रूई भिंगोकर बंद कर देना चाहिए।

फल वेधक कीट (*वायरेकोला आइसोकेटस*)

इस प्रकार के कीट मुख्य रूप से लाल रंग के होते है एवं फलों में छिद्र बनाते है, जिससे फल परिपक्व हुए बिना ही गिर जाता है। इस प्रकार के कीटों का नियंत्रण मुखतः एंडोसल्फान कीटनाशी (0.07%) का छिड़काव करके किया जाता है।

रोग

रस्ट (*रावनेलिया इमब्लीकी*)

इस रोग से प्रभावित फल एवं पत्तियों पर गोल काले धब्बे हो जाते है, जिससे फल खराब होकर गिर जाते है। इसके निवारण के लिए मुख्यतः सल्फर (0.2%) या मेंन्कोजेब (0.2%) का छिड़काव करना चाहिए।

एन्थ्रोकनेज (*कोलिकोट्राइकम*)

इस रोग से प्रभावित फलों पर अनियमित आकार के धब्बे हो जाते है तथा इसके बीच में लाल रंग के फफूँद होते है, जिससे फल खराब हो जाते है। इसके नियंत्रण हेतु फल के सड़ने के पहले बेबीस्टीन (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

उपयोगिता

आंवला के फल मुख्यतः अपने आयुर्वेदिक गुणों हेतु जाना जाता है। मुख्य रूप से इसका उपयोग च्यवनप्राश एवं त्रिफला बनाने हेतु किया जाता है। इसके अलावा आंवले से अन्य उत्पाद जैसे मुरब्बा, कैंडी, बर्फी, पाउडर, जूस, आचार लड्डू व सौन्दर्य प्रसाधन उत्पाद आदि भी बनायें जाते है। एन्टीओक्सीडेंट एवं विटामिन सी की प्रचुर मात्रा होने के कारण आँख और पेट के उपचार हेतु काम आता है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विधि से आंवला की खेती करने से इसके उपज मे प्रति पौध प्रतिवर्ष अपेक्षाकृत बढ़ोत्तरी होगी। इसके महत्वपूर्ण औषधीय गुणों के कारण इसका सेवन प्रतिदिन उचित मात्रा मे करने से शरीर मे प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती जाएगी अथवा इसके उचित उपयोग से तरह-तरह के बीमारियों से निजात मिल सकता है। इसकी खेती करने से प्राप्त फलों से तरह-तरह के उत्पाद जैसे मुरब्बा, कैंडी, जूस इत्यादि बनाकर खुद के लिए और इससे जुड़े हुए लोगों के लिए आय का स्रोत भी कर सकते है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

गुणवत्तापूर्ण अमरूद उत्पादन के लिए बरसात में फल मक्खी का प्रबंधन

मनीष कुमार*, कुमारी कुसुम, इमामुद्दीन शाह

उद्यान विज्ञान विभाग, जी. बी. पन्त कृषि एवं प्रोद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर

पत्राचारकर्ता: maneeshk38904@gmail.com

परिचय

अमरुद भारत वर्ष के अनेक फलों में से एक प्रमुख फल है, जिसका उपयोग आमतौर पर स्वादिष्ट और ताजे फल के रूप में किया जाता है। यह 5 मिलियन टन (2021-22 सेकंड विज्ञापन अनुमान) के अनुमानित वार्षिक उत्पादन के साथ 0.32 मिलियन हेक्टेयर के क्षेत्र में बड़े पैमाने पर उगाया जाता हैं। अमरूद ताजे फल के रूप में खाने के अलावा कई मूल्यवर्धक उत्पाद जैसे जैम, जैली, टॉफी, जूस आदि बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है। अमरूद, जिसे अक्सर 'उष्णकटिबंधीय फलों का सेब' कहा जाता है, विटामिन सी, पेक्टिन, कैल्शियम और फॉस्फोरस जैसे खनिजों का एक अच्छा स्रोत है, इसके अलावा, प्रचुर मात्रा में आहार फाइबर और कई स्वास्थ्य लाभ भी होते हैं। भारत में इसकी बागवानी बड़े पैमाने पर की जाती है। अमरूद की फसल में कई प्रकार के कीटो का संक्रमण होता है, जिससे उपज पर प्रभाव पड़ता है। विशेषकर अमरूद के उत्पादन में फल मक्खी सबसे विनाशकारी कीट है।

फल मक्खियाँ विशेष रूप से बरसात के मौसम के दौरान अमरूद के उत्पादन में एक प्रमुख सीमित कारक रही हैं। फल मक्खी का संक्रमण 6.0 से 87 प्रतिशत तक होता है।

फल मक्खी पके फलों को मानव उपभोग के लिए अयोग्य बना देती है। कीटों में, फल मक्खी विशेष रूप से *बैक्ट्रोसेरा* प्रजाति अमरूद का सबसे महत्वपूर्ण और आक्रामक कीट है। इसके अलावा, *बैक्ट्रोसेरा* की अन्य महत्वपूर्ण प्रजातियाँ भी जैसे *बी. डोरसेलिस, बी. कुकुरबिटे* और *बी जोनाटस* जो पूरे देश में अमरूद के बागों में पायी जाती हैं। गंभीर मामलों में, फलों की क्षति फल मक्खी की आबादी, इलाके, विविधता, मौसम, होस्ट पौधों की उपस्थिति आदि के आधार पर भी निर्भर करती है।

वयस्क फल मक्खियाँ आकार में घरेलू मक्खियों के समान होती हैं, जो लाल-भूरे व भूरे-काले रंग की होती हैं। इनके पंख पारदर्शी होते हैं, जिनमें सिरे के पास भूरे रंग के धब्बे होते हैं। मादा में एक नोकदार ओवीपोजिटर पाया जाता है। जिसके माध्यम से यह स्वस्थ, जल्दी पकने वाले फलों में छिद्र कर देती हैं और छह या अधिक केले के आकार के अंडे देती हैं। स्टिंग साइटें बदरंग या काले धब्बे के रूप में दिखाई देती हैं, जो गम के विशिष्ट ब्लॉब्स या फिलामेंट्स को बाहर निकालने में मदद करती हैं। चूँकि फलों की त्वचा फट जाती है, जिसके कारण जीवाणुओं द्वारा द्वितीयक संक्रमण गूदे के क्षय को प्रेरित करता है और इसके बाद फल हल्का भूरा हो जाता है। अंडे दो से तीन दिनों के भीतर टूट जाते हैं और मैगट फलों के ऊतकों पर फीड करते हैं, जो फलों की विपणन क्षमता को प्रभावित करते हैं। इसलिए, यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि उत्पादकों को इस खतरनाक कीट का प्रबंधन करने और फलों की तुड़ाई के लिए एकीकृत तरीकों से सुरक्षित विकल्प प्रयोग किये जाये, जो मानव उपभोग के लिए तथा पर्यावरण की दृष्टि से भी सुरक्षित हो।

अमरूद में बहार और फल मक्खी का प्रकोप

अमरुद के लिए, उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय जलवायु एक वर्ष में 2-3 फसलें देने के लिए अनुकूल मानी जाती है। इन तीन फसलों को अम्बे बहार, मृग बहार और हस्त बहार के नाम से जाना जाता है। उत्तर भारत में मुख्यतः दो फसलें फलन में आती हैं, प्रथम अप्रैल-मई में पुष्पन (अम्बे बहार), जिनके फल जुलाई से सितंबर (बरसात के मौसम) तक प्राप्त किये जा सकते हैं और उसके बाद जून-जुलाई में फूलों का आना (मृग बहार), जिनके फल नवंबर से मार्च तक प्राप्त किये जा सकते हैं। दक्षिणी भारत में, अक्टूबर (हस्त बहार) में तीसरे फूल आना शुरू होते हैं, जिनके फलों की तुड़ाई बरसात के मौसम में की जाती है। अमरूद में तीनों मौसमों में, बरसात के मौसम के फल, फल मक्खियों से अधिक गंभीर रूप

ISSN No. 2583-3316

तालिका 1: अमरूद में फल मक्खी संक्रमण के लिए विभिन्न किस्मों की प्रतिक्रिया

क्रम संख्या	प्रतिक्रिया	किस्में
1	सहनशील	कैटल्या अमरूद, केजी 1, थाई पिंक, थाई सफेद, शिलोंग -1
2	मध्यम सहनशील (20-30%)	वीएनआर बिही, पंजाब पिंक, एमपीयूएटी 1, अर्का अमुल्या, श्वेता, हिसार सुर्खा, पीअर शेप्ड,बरफखाना, बेहात कोकोनट, चित्तीदार
3	कम संवेदनशील (10%संक्रमण)	इलाहाबाद सुरखा, कामासारी, नासिक, अर्का किरन, अर्का रश्मि, स्पीयर एसिड और सुपीरियर खट्टा
4	सबसे कम संवेदनशील (4.8% संक्रमण)	ललित, स्ट्रॉबेरी अमरूद,एल-46, चाइनीज अमरूद
5	अत्यधिक संवेदनशील (50%)	इलाहाबाद सफेदा, अर्का अमुल्या, सरदार, बनारसी सुर्खा, पंत प्रभात, हिसार सफेदा, कोहिर सफेदा, सफेद जाम

से संक्रमित होते हैं। अमरूद, फल मक्खियों के विकास चरणों जैसे (अंडा, लार्वा, प्यूपा और वयस्क) को पूरा करने के लिए सबसे अनुकूल फसल है। बरसात के मौसम में अमरूद में अधिक संख्या में फूल और फल लगते हैं, जबकि सर्दियों के समय फलों का वजन अधिक होता है। यह पता चला है कि बारिश के मौसम में 83 प्रतिशत तक *बैक्ट्रोसेरा जोनाटा* को ट्रैप द्वारा मिटाया जा सकता है। अमरूद में फल मक्खी का प्रकोप बिहार, तमिलनाडु, कर्नाटक, दक्षिण गुजरात, मध्य प्रदेश, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश और पंजाब राज्यों में मुख्यतः पाया जाता है। भारत में तीन *बैक्ट्रोसेरा* प्रजातियाँ अमरूद की फसल को नुकसान पहुँचाती हैं, और इनकी संख्या गर्म और आर्द्र जलवायु में तेजी से बढ़ती हैं। फल मक्खी की गतिविधि 1.5 मीटर की ऊँचाई पर अधिकतम देखी जाती हैं। उत्तरी भारत में, अमरूद की फल मक्खियाँ, क्रमशः *बी. जोनाटा, बी. डोरसेलिस* और *बी. कुकुरबिटा* प्रमुख हैं, जो फसल को नुकसान पहुँचाती हैं। दक्षिण भारत में, अमरूद की प्रमुख फल मक्खियों में से एक है, जो 80 प्रतिशत तक नुकसान पहुँचाती है। पूर्वी भारत में, *बैक्ट्रोसेरा कोरेक्टा,* झारखंड, पश्चिम बंगाल में फलों की विस्तृत विविधता पर आक्रमण करती है, जबकि दक्षिण-पश्चिमी तटीय क्षेत्रों, जैसे केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु, महाराष्ट्र और गुजरात में भी फल मक्खी का खतरा बढता जा रहा है।

फल मक्खी के संक्रमण में अमरूद की किस्मों की प्रतिक्रिया यह देखा गया है की, अमरुद की दोनों मौसम की फसलों में फल मक्खी का प्रकोप भिन्न-भिन्न होता है और यह प्रकोप किस्मों पर भी निर्भर करता है। अप्रबंधित बागानों में फल मक्खी का प्रकोप 10-95 प्रतिशत तक हो सकता है। बरसात के मौसम में फल मक्खी का प्रकोप अमरुद में अत्यधिक होता है।

प्रबंधन तकनीकियाँ

फल मक्खियों को प्रबंधित करना बहुत मुश्किल होता है क्योंकि ये पॉलीफैगोस और मल्टी-वोल्टाइन कीट हैं, और वयस्क उच्च प्रजनन दर के साथ अत्यधिक गतिशील होते हैं। फल मक्खियों के क्वारंटाइन (अलग करना) महत्व के प्रकाश में, उत्पादकों द्वारा अपनाने के लिए कई सुरक्षित और नवीन प्रबंधन विकल्प सुझाये गये हैं। चूँकि कीटनाशकों के प्रयोग से कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र बाधित होता है, इसलिए पर्यावरण के अनुकूल और नवीन प्रौद्योगिकियों के संभावित उपयोग को बढ़ावा देने की आवश्यकता है।

बागानों की सफाई

क्षतिग्रस्त फलों को नियमित रूप से बागान से हटाना चाहिए तथा पेड़ों के चारो ओर (3. सेमी तक) मिट्टी की खुदाई कर देने से फल मक्खी के प्यूपा सूरज की तेज रोशनी के संपर्क में आते ही नष्ट हो जाते हैं। जैव कारकों का प्रयोग भी फल मक्खी के संक्रमण को कम करने में महत्वपूर्ण पाया गया है।

जैविक नियंत्रण

अंडे और लार्वा फल मक्खी में प्रमुख हानिकारक चरण हैं। *हाइमनोप्टेरान पैरासिटोइड्स* आमतौर पर ज्यादा उपयोग में लाये जाते हैं, क्योंकि अकेले जैविक नियंत्रण स्थायी आधार पर उच्च स्तर का नियंत्रण प्रदान नहीं कर सकता है। *डिरहिनिस* प्रजाति, *कैराबिड प्रीडेटर (फेरोपसोफस सोब्रिनस)* और *ब्रैकोनाइड* लार्वा एंडोपैरासिटोइड (*बायोस्टेरेस लॉन्गिकोडैटस*) का उपयोग

विशेष रूप से जुलाई और अगस्त के दौरान फल मक्खी के विभिन्न चरणों पर हमला करता है और मारता है। फल मक्खी की आबादी को कम करने के लिए ताजा पाले गये कीड़ों का प्रयोग करें।

कीट नाशक का प्रयोग

जब फल मक्खी का गंभीर प्रकोप देखा जाता है तो कीटनाशक को फल मक्खी के प्रबंधन के लिए अंतिम विकल्प के रूप में अपनाया जाता है। फलों के विकास के प्रारंभिक चरण में 2 मिलीलीटर/लीटर पानी की दर से रोगर छिड़का जाना चाहिए और उसके 21 दिनों बाद इसका दुबारा से छिड़काव करना चाहिए। इसके बाद, फल परिपक्वता के समय नीम के तेल आधारित और वनस्पति आधारित कीटनाशक का छिड़काव किया जाना चाहिए। प्रारंभिक फल विकास के समय साप्ताहिक अंतराल पर 500 लीटर पानी में 1.25 एल सुमिसिडिन 20 ईसी (फेनवेलरेट) का छिड़काव अत्यधिक प्रभावी पाया गया है।

एकीकृत कीट प्रबंधन तकनीकियाँ

सुरक्षित फल उत्पादन के लिए एकीकृत तकनीकियों को बढ़ावा देने की अत्यधिक आवश्यकता है और ये बरसात के मौसम की अच्छी फसल के लिए कारगर हैं। एकीकृत कीट प्रबंधन अमरुद में निम्न विधियों द्वारा किया जा सकता है।

किस्मों का चुनाव: यह देखा गया है कि चिकनी परत वाली किस्में जैसे रेड फ्लेश, इलाहाबादी सफेदा और लोकल फल मक्खी के लिए अति संवेदनशील होती है तथा इन किस्मों में फल मक्खी का प्रकोप 62.6-81.2 प्रतिशत तक पाया जाता है, जबकि खुरदरी परत वाली किस्में जैसे, पीअर शेप्ड कम सवेंदनशील (< 35.1%) होती हैं। इसी तरह सफेद गूदेदार किस्मों में फल मक्खी का प्रकोप 35.2-56.3 प्रतिशत तक पाया जाता है। व्यावसायिक किस्मों जैसे सरदार, इलाहाबादी सफेदा और अर्का अमूल्या में फल मक्खी का प्रकोप अधिक होता है, जबकि अर्का रश्मि व अर्का किरन में फल मक्खी का प्रकोप अपेक्षाकृत कम होता है।

फल बैगिंग: वर्तमान में, फल मक्खी को नियंत्रित करने के लिए फलों की थैलाबन्दी करना एक प्रभावी तरीका है। इस विधि से फल मक्खी को शत प्रतिशत तक नियंत्रित किया जा सकता है। उत्पादकों द्वारा यह तकनीक व्यापक रूप सघन बागवानी तथा हेज रो प्लांटिंग प्रणाली में अपनाई जाती है। फलों की थैलाबंदी करने से फलों के आकार व फलों की गुणवत्ता दोनों में सुधार होता है। यह कठिन व नियमावली प्रक्रिया होने के बावजूद भी, निर्यात गुणवत्ता को पूरा करने के

लिए देश भर में इस तकनीक का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। अमरूद के फलों की बैगिंग निश्चित रूप से उत्पादकों की उपज और शुद्ध आय बढ़ाने में सफल पाई गई है। विभिन्न प्रकार के बैग जैसे अखबार, छिद्रित पॉलीथीन, मसलिन कपड़ा, जालीदार कपड़ा, नायलॉन जाल, पॉलीप्रोपाइलीन नॉन-वोवन बैग, बटरपेपर, ब्राउन पेपरव पॉलीप्रोपाइलीन बैग आदि का उपयोग फलों की थैलाबंदी के लिए कर सकते हैं। फलों की थैलाबंदी करके, बरसात के मौसम में अमरुद के फलों को फल मक्खी के प्रकोप से बचाया जा सकता है, अंततः फल अच्छी गुणवत्ता के होते हैं तथा इनका बाजारी मूल्य भी अधिक मिलता है।

बैट का प्रयोग (BAT): मादा फल मक्खियाँ बैट की ओर ज्यादा आकर्षित होती हैं, जिसमें प्रोटीन का तरल घोल और किण्वित चीनी होती है, जो मादा फल मक्खियाँ को मारता है। इसके अलावा, प्रोटीन बैट नर और मादा फल मक्खियों दोनों को आकर्षित करता है, जिससे इसे मेल **एनीहिलेसन** की तुलना में अधिक प्रभावी माना जाता है। जीएफ-120 एनएफ नेचुरलाइट प्रोटीन फ्रूट फ्लाई बैट को यूएसए में फल मक्खियों के खिलाफ अमरुद के जैविक उत्पादन के लिए मंजूरी दे दी गयी है। वयस्क मक्खी के उद्भव के दौरान पेड़ पर बैट लगाना (फीडिंग उत्तेजक = कीटनाशक) भी एक प्रभावी तरीका है। इसी तरह, पोइजन बैट में केले और अमरूद के फलों के

तालिका 2: अमरूद में फल मक्खी के संक्रमण को नियंत्रित करने के लिए प्रबंधन रणनीतियाँ

क्रम संख्या	प्रबंधन के उपाय	क्रियायें
1	स्वच्छता	संक्रमित फलों को इकट्ठा करके उनको बाग से दूर गड्ढों में दबा दें।
2	पैरा-फेरोमोन ट्रैप	मिथाइल यूजेनॉलः एथिल अल्कोहल 60 मिलीलीटर + मिथाइल यूजेनॉल 39 मिलीलीटर + स्पिनोसैड (कीटनाशक) 1 मिलीलीटर मिलायें और ट्रैप (10/हेक्कोटेयर) को पेड़ों पर लटका दें।
3	बैट का छिड़काव	लगभग 100 ग्राम गुड + 2 मिलीलीटर डेकामेथ्रिन 2.8 ईसी 1 लीटर पानी में मिलाकर साप्ताहिक अंतराल पर पेड़ के तनों पर छिड़काव करे तथा फल लगने के दौरान 10,000 पीपीएमअजाडिरैक्टिन @ 1.0 मिलीलीटर / लीटरकी दर से छिड़काव करें ।
4	रासायनिक कीटनाशक	डेल्टामेथ्रिन (0.025%) फल सेट होने के 45 दिनों के बाद कम से कम 15 दिनों के अंतराल को तीन बार शुरू करता है।
5	वानस्पतिक कीटनाशक	नीम आधारित (अजाडिरैक्टिन) (10-20मिलीलीटर/लीटर), करंज का तेल (5-10 मिलीलीटर/लीटर पानी) और तंबाकू अर्क (250 ग्राम सूखी पत्ती/1000 मिलीलीटर) को 5 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।
6	शस्य क्रियांए	(i) गहरी मिट्टी की जुताई (ii) पोषण प्रदान करने वाले जैसे कुकुर्बिट्स, सोलेनेसिअस पौधों को हटायें (iii) फसल चक्र अपनाएं (iv) स्वच्छ खेती व नियमित निराई (v) छंटाई (vi) प्राकृतिक कीट शत्रुओं का संरक्षण, (vii) जल्दी फलों की तुड़ाई (viii) ट्रैप लगाना (ix) विकर्षक फसलें लगाना और (x) पेड़ के चारों ओर मिट्टी डालें और 40 मिलीलीटर/लीटर की दर से क्लोरपाइरीफॉस से ड्रेनचिंग करें।
7	फलों की थैलाबंदी	पारदर्शी पॉलीप्रोपाइलीन (20 I गेज) बैग, अखबार बैग और फ्रूट फ्लाई नेट बैग से अलग-अलग फलों की थैलाबंदी करे, जब फल 1.5-2.0 सेमी डायमीटर का हो।
8	बहिष्करण के उपाय	पूरे पौधे में तनें तक जाली लगाकर भी प्रभावी नियंत्रण मिलता है।
9	खाद्य आकर्षण/ प्रोटीन	हाइड्रोलाइसेट पके हुए फल (कद्दू, केला + कीटनाशक) बैटके रूप में, प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट (न्यू-लुररुष्ट्र + पशुधन / पोल्ट्री खादका प्रयोग करें। बैट घोल तैयार करने के लिए (3%) बोरेक्स + प्रोपाइलीन ग्लाइकोल (10%) के साथ (9%) न्यू-लुर युक्त एक जलीय घोल में बोरेक्स के साथ एनयू-लोर का प्रयोग करें।
10	जैव-कीटनाशक	मेटारिजियम एनिसोप्लिया (2 x 10^{-8cfu} (कॉलोनी फोर्मिंग यूनिट) /g पाउडर @ 1.0 लीटर पानी में 2 चम्मच) का प्रयोग करें।

गूदे और 0.025 प्रतिशत डेल्टा मेथ्रिन और 10 प्रतिशत गुड़ या 10 प्रतिशत गूदेदार पके केले, पानी में मिलाकर बैट का घोल बनाकर छिड़काव कर सकते हैं।

मेल एनीहिलेसन तकनीक (MAT): यह तकनीक फल मक्खी को नियंत्रण करने के लिए अधिक प्रभावी है तथा यह एक पर्यावरणीय अनुकूल तकनीक भी है। मिथाइल यूजेनॉल में घ्राण के साथ-साथ फैगो-उत्तेजक क्रिया दोनों होती है और इसे एक बाग में 800 मीटर की दूरी से फल मक्खियों को आकर्षित करने के लिए जाना जाता है।

ट्रैपक्रॉपः फल मक्खी पॉलीफैगस कीट है और मुख्य फसल के आसपास के क्षेत्रों में पाये जाने वाले होस्ट पौधों पर भी फीड करती है। फल मक्खियों से सबसे अधिक प्रभावित होने वाली फसलें जैसे कुकुर्बिटस सब्जियाँ (79% संक्रमण) फल (14%) (नारंगी, मैंडारिन, आम, आडू और अनार) और सोलनियस

ISSN No. 2583-3316

जैविक अमरुद उत्पादन में पर्यावरण के अनुकूल प्रबंधन तकनीकियाँ

जैविक फल उत्पादन के लिए, निम्नलिखित प्रबंधन तकनीकियों का उपयोग कर सकते हैं जैसा कि तालिका में दिखाया गया है।

क्रम संख्या	महीना	महत्वपूर्ण क्रियाएँ
1	मई	1.मार्च और अक्टूबर के दौरान 15 दिन के अंतराल पर गुड़ाईकरें। 2. नीम/करंज केक को मिट्टी में 250 किलो/एकड़ की दर से डालें। 3. स्वच्छ जुताई। 4. गिरे हुए फलों को समय पर और नियमित रूप से हटाकर उन्हें दफनाएं। 5. नीम के तेल (0.2%)का छिड़काव 7 दिन के अंतराल (मई से अगस्त) पर करें।
2	जून के अंत में	1. मिथाइल यूजेनॉल @ 5 ट्रेप / एकड का उपयोग। 2. फलों की थैलाबंदी। 3. नीम के तेल और तुलसी के अर्क का छिड़काव।
3	जुलाई के अंत में	1. बैट का छिड़काव 2. मिथाइल यूजेनॉल @ 5 ट्रेप / एकड का उपयोग़। 3.फलों की थैलाबंदी। 4.नीम के तेल और तुलसी के अर्क का छिड़काव।
4	अगस्त	1. गिरे हुए फलों का संग्रह और विनाश। 2. स्वच्छ जुताई । 3. नीम के तेल (0.2%) का छिड़काव 7 दिन के अंतराल (मई से अगस्त) पर करें।

सब्जियाँ (6%) भी अमरूद के बाग में उगाई जा सकती है। यह अमरूद के संक्रमण को कम करने का एक प्रभावी तरीका है। ट्रैप फसलों के संक्रमित फलों को भी नियमित रूप से एकत्र और नष्ट करना चाहिए।

वानस्पतिक कीटनाशक अर्क का प्रयोग: नीम बीजकरनल अर्क (एनएसकेई) का छिड़काव 0.2-4.0 प्रतिशत की दर से, फल मक्खी के नियंत्रण के लिए कुशल निवारक है, और इसके छिड़काव से फल मखियों की संख्या 87.5 से 99.2 प्रतिशत तक कम हो जाती है। अमरूद में फल मक्खी द्वारा अंडे देने की क्रिया को कम करने में 0.5 से 1.0 प्रतिशत नीम के तेल का छिड़काव भी प्रभावी पाया गया है। इसका छिड़काव हर 10 दिन के अंतराल पर करना बेहतर होता है, जिससे की कीटनाशक अवशेषों के मुद्दे को कम से कम किया जा सके। इसी प्रकार करंज का तेल व नीम के पत्ते का मेथनॉलिक अर्क का छिड़काव भी किया जा सकता है। फल मक्खियों के संक्रमण के प्रबंधन के लिए विभिन्न नियंत्रण उपाय तालिका 2 में दिए गए हैं। बरसात के मौसम में फलों की थैलाबंदी व पोषक तत्वों के छिड़काव से अमरूद के फलों की गुणवत्ता में काफी सुधार होता है और गुणवत्ता वाले अमरूद के फल मिलते हैं।

निष्कर्ष

अमरूद प्रमुख लाभकारी फलों की फसलों में से एक है। यह फसल एक वर्ष में दो बार पैदावार देती है, बारिश के मौसम की फसल, फल मक्खी के उच्च संक्रमण के कारण खराब गुणवत्ता वाली मानी जाती है, अगर ऊपर सुझाये गए प्रबंधन उचित एकीकृत देखभाल के साथ उपयोग किये जाये, तो गुणवत्ता वाले फल भी उत्पादक इस मौसम में ले सकते हैं। ऊपर सुझाये गए विभिन्न आईपीएम मॉड्यूल को अमरूद उत्पादकों द्वारा अपनाया जा सकता है, जो गुणवत्ता वाले विपणन योग्य फलों की उपज में वृद्धि करेगा और इस प्रकार हानिकारक कीटनाशकों के प्रयोग को कम करेगा।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

सब्जियों में बीज प्रारंभिकरण के विभिन्न प्रकार और उनके लाभों की सूची

क्रमांक	फसल	प्रारंभिकरण के प्रकार	लाभ
1	टमाटर	पानी से प्रारंभिकरण (Hydro priming) हार्मोनल प्रारंभिकरण Hormonal-priming	समान रूप से बीजांकुरित पौधे का विकास 40.56% तक अंकुरण में वृद्धि हुई है।
2	भिन्डी	पानी से प्रारंभिकरण (Hydro priming)	त्वरित अंकुरण, सुधारित बीज विकास और समान वनस्पति स्थापना। आवेगी औसत तना लंबाई और व्यास सबसे अधिक होते हैं।
3	चेरी टमाटर	न्यूट्रिएंट प्रारंभिकरण (Nutrient priming)	बीज अंकुरण के दौरान एंटीऑक्सिडेंट प्रणाली की क्षमता में वृद्धि, उत्पाद की गुणवत्ता में वृद्धि, उच्च अवसादनिक सहिष्णुता में सुधार।
4	बैंगन	अंतः संचारित प्रारंभिकरण (Osmopriming)	पत्तियों की संख्या, पौधे की ऊँचाई, फलों की उत्पादनता, फल की लंबाई और 50% फूलने के दिनों को बढ़ाने और कम करने का भी प्रारंभिकरण प्रभावी होता है।
5	करेला	पानी से प्रारंभिकरण (Hydro priming)	पौधे के प्रदर्शन में सुधार होता है और ऊतकों के जल सामग्री को बनाए रखने में मदद करता है।
6	गाजर	अंतः संचारित प्रारंभिकरण Osmopriming (PEG)	अंकुरण में वृद्धि होती है।

बीज के अंकुरण गुणवत्ता में सुधार के लिए बीज प्राथमिकी तकनीकें

बुवाई के बाद खेतों की प्रायोगिक परिस्थितियों में बीजों का उच्च और समान उगना अच्छी फसल के लिए जरूरी है। बीजों का उगाव विषम तापमान और वातावरण में कम होता है और समान नहीं रह पाता। उत्तर भारत के सब्जी किसान बसंतकालीन फसल की अगेती बुवाई के लिए सामान्य से अधिक बीज-दर लेते हैं। कृषक अधिक आय की उम्मीद में समयपूर्व बुवाई करते हैं। गुणात्मक बीजों की बुवाई में उगाव प्रतिशत को बढ़ाने में बीज प्राइमिंग की प्रक्रिया कारगर पाई गई है।

महत्वपूर्ण मुद्दे

यदि किसी कारण से बुआई नहीं की जा सकती है, तो बीज प्राइमिंग बीजों को छाया में सुखाया जाना चाहिए और फिर एक साधारण बीज के रूप में बोया जाना चाहिए। बीज बर्बाद नहीं होते हैं, बीज भक्षण फायदेमंद नहीं है, लेकिन यह नुकसान नहीं पहुँचाता है।

यदि बुवाई के बाद खरपतवारों का उपयोग करना हो, तो बुवाई से पहले 2-3 दिनों के लिए खेतों में पानी से स्प्रे करें।

बुवाई के समय उर्वरक (नाइट्रेट, फॉस्फोरस) देना चाहिए।

2 लीटर पानी के लिए 3 ग्राम या 4 लीटर पानी के लिए 3 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट का उपयोग करके बीजारोपण को बढ़ावा दें।

बीज प्राइमिंग प्रक्रिया

बीज को साफ करें और उचित समय पर कमरे के तापमान में शुद्ध पानी में भिगोयें। उचित समय (बीजों को अंकुरित करने और भिगोने में लगने वाले समय का रिकॉर्ड रखते हुए) निर्धारित किया जाता है। बीज पर पाँच इंच से अधिक पानी नहीं होना चाहिए।

बीज को भिगोने के बाद सूखने के लिए एक कटोरे में रखें और सुखायें। यह छाया या ऊन को प्रभावित नहीं करता है। यह संभव है जब बीज को रासायनिक या जैविक बीज के

लिए संसाधित किया जाता है। (रोगनिरोधी घटकों का बीज बनाना चाहिए) हमेशा की तरह बीज बोना चाहिए।

बीज प्राइमिंग के प्रकार

- हेलो प्राइमिंग (नमक समाधान-NaCl का उपयोग)
- ओसमो प्राइमिंग (आसमाटिक समाधान का उपयोग - खूँटी)
- सोलिड मैट्रिक्स प्राइमिंग
- हाइड्रो प्राइमिंग (पानी का उपयोग बीज की मात्रा को दोगुना करता है)
- रेत मैट्रिक प्राइमिंग (नम रेत का उपयोग)

बीज प्राइमिंग के लाभ

- अंकुरण प्रतिशत को बढ़ाता है।
- अंकुरण की गति और समानता को बढ़ाता है।
- पानी और तापमान तनाव के प्रति प्रतिरोध में सुधार करता है।
- छोटे बीजों के लिए अत्यधिक उपयुक्त है।
- पैदावार बढ़ाता है।
- सूखी खरीफ और रबी फसलों के लिए बहुत उपयोगी है।

जोखिम

यदि बीज को लंबे समय तक भिगो कर रखे तो बीज बोने से पहले अंकुरण से निष्क्रिय हो जाता है और पूरे बीज बर्बाद हो जाते हैं। पानी का तापमान फसल के अनुसार बदलता रहता है। अनावश्यक रूप से गर्म पानी के उपयोग से बचें। पानी में क्लोरीन, ब्लीचिंग या अन्य रासायनिक कीटाणुनाशक का उपयोग न करें।

निष्कर्ष

बीज प्राइमिंग प्राथमिकता प्रदान करता है और परिस्थितियों में फसल के प्रदर्शन को बढ़ाने के लिए सबसे अच्छा विकल्प है। यह विभिन्न अवधारणाओं को सुधारता है और आगामी अंकुरण को सहायता प्रदान करता है। यह एक सस्ती तकनीक है, जो बीज के प्रदर्शन को अधिकतम करने के लिए उपयुक्त है, हालांकि यह नाजुक होने के कारण सतर्कता से की जानी चाहिए। बीज प्राइमिंग के लाभों को दोबारा प्रमुख बनाना और अस्थायी वातावरण और दुर्गम भूमि की व्यवस्था में इसका उपयोग आवश्यक है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

सब्जी फसलों में बीज प्राइमिंग/प्राथमिकी का महत्व

निखिल ठाकुर[1*], जसदीप कौर[2], दीपा शर्मा[3], आकृति[4] एवं मीनाक्षी[5]

[1,3,4] एवं [5]सब्जी विज्ञान विभाग, डॉ यशवन्त सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय नौणी, सोलन

[2]सब्जी विज्ञान और फूल विभाग, चौधरी सरवण कुमार हिमांचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय पालमपुर, कांगड़ा

पत्राचारकर्ता: nikhilthakur529@gmail.com

परिचय

बीज प्राइमिंग एक सस्ती और बहुत आसान बीजोपचार प्रक्रिया है। प्राइमिंग बीजों का पूर्व उपचार है, जिसमे बीजों को पानी में भिगोया जाता है, छाया में सुखाया जाता है और फिर बोया जाता है। बीज प्राइमिंग बीजों के नियंत्रित जलयोजन का एक स्तर है, जो पूर्व-रोगाणु संबंधी चयापचय को बढ़ावा देता है, लेकिन मूल के वास्तविक उद्भव को रोकता है।

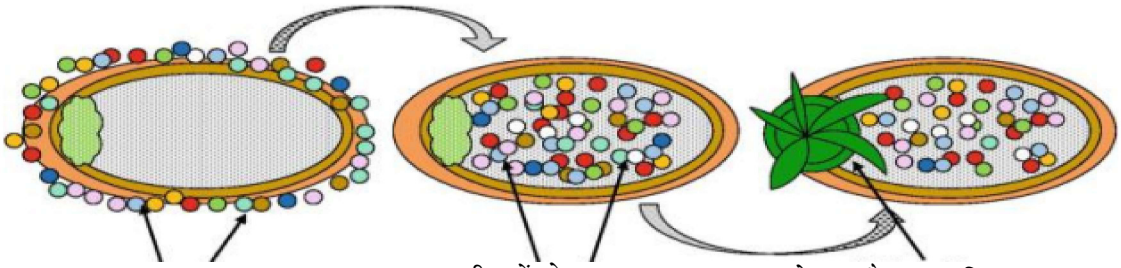

बीज प्राइमिंग तकनीक का सिद्धांत

बीज को बोने से लेकर उसके प्रत्यारोपण तक किसी भी समय अगर अंकुरण के लिए कोई अनुकूलन नहीं होता है, तो उपेक्षित अंकुरण के कारण क्षति होती है। यदि फसल देर से बोई जाती है, तो उसे अनुकूल मौसम के लिए कम समय मिलेगा, जो फसल की उपज को प्रभावित करेगा। बीज प्राइमिंग तकनीक बीज अंकुरण करती है। बीज सीधे पानी में भिगोए जाते है। इसलिए यह जमीन से पानी मिलने का समय बचाता है। बीज प्राइमिंग में सभी बीजों का अंकुरण एक समान होता है। इसलिए अधिकांश बीजों को चयापचय द्वारा एक समान अंकुर मिलता है।

खेती में बीज आवश्यकता का महत्व

खेती में बीज प्राथमिकी एक महत्वपूर्ण तकनीक है, जो बीजों के प्रदर्शन और पौधों की वृद्धि को बढ़ाती है। यह निम्नलिखित कारणों से महत्वपूर्ण है।

क. उत्कृष्ट प्रदर्शन: बीज प्राथमिकी से अधिक समयबद्धता और अधिक उत्पादकता मिलती है। यह प्रक्रिया बीजों को मजबूत बनाने और स्वस्थ बनाने में मदद करती है।

ख. अनुक्रमणिका की वृद्धि: अनुक्रमणिका विकास बीज प्राथमिकी से बढ़ता है। यह बीजों के बीच समान और संगठित उद्भवन को संभव बनाता है, जिससे फलों के आकार, विकास और गुणवत्ता में सुधार होता है।

ग. कठिन पर्यावरण का समर्थन: बीज प्राथमिक खेती को कठिन परिस्थितियों में सहायता प्रदान करती है। यह बीजों को मिट्टी की कमी, उष्णता, सूखा या भीषण गर्मी से लड़ने की क्षमता देती है।

घ. अधिक उत्पादन: किसान बीज प्राथमिकी का उपयोग करके अधिक उत्पादन कर सकते हैं। यह तकनीक किसानों को अधिक उत्पादकता के साथ खेती करने में मदद करती है और उन्हें अधिक मुनाफा कमाने का अवसर मिलता है।

ङ. बचाव और सुरक्षा: पौधों को बीज प्राथमिकी से बचाया जा सकता है। यह पौधों को रोगों, कीटों और अन्य हानिकारक रोगजनक जीवों से लड़ने की क्षमता देता है और उनकी प्रतिरक्षा को मजबूत करता है।

ISSN No. 2583-3316

सब्जियों में बीज प्रारंभिकरण के विभिन्न प्रकार और उनके लाभों की सूची

क्रमांक	फसल	प्रारंभिकरण के प्रकार	लाभ
1	टमाटर	पानी से प्रारंभिकरण (Hydro priming) हार्मोनल प्रारंभिकरण Hormonal-priming	समान रूप से बीजांकुरित पौधे का विकास 40.56% तक अंकुरण में वृद्धि हुई है।
2	भिन्डी	पानी से प्रारंभिकरण (Hydro priming)	त्वरित अंकुरण, सुधारित बीज विकास और समान वनस्पति स्थापना। आवेगी औसत तना लंबाई और व्यास सबसे अधिक होते हैं।
3	चेरी टमाटर	न्यूट्रिएंट प्रारंभिकरण (Nutrient priming)	बीज अंकुरण के दौरान एंटीऑक्सिडेंट प्रणाली की क्षमता में वृद्धि, उत्पाद की गुणवत्ता में वृद्धि, उच्च अवसादनिक सहिष्णुता में सुधार।
4	बैंगन	अंतः संचारित प्रारंभिकरण (Osmopriming)	पत्तियों की संख्या, पौधे की ऊँचाई, फलों की उत्पादनता, फल की लंबाई और 50% फूलने के दिनों को बढ़ाने और कम करने का भी प्रारंभिकरण प्रभावी होता है।
5	करेला	पानी से प्रारंभिकरण (Hydro priming)	पौधे के प्रदर्शन में सुधार होता है और ऊतकों के जल सामग्री को बनाए रखने में मदद करता है।
6	गाजर	अंतः संचारित प्रारंभिकरण Osmopriming (PEG)	अंकुरण में वृद्धि होती है।

बीज के अंकुरण गुणवत्ता में सुधार के लिए बीज प्राथमिकी तकनीकें

बुवाई के बाद खेतों की प्रायोगिक परिस्थितियों में बीजों का उच्च और समान उगना अच्छी फसल के लिए जरूरी है। बीजों का उगाव विषम तापमान और वातावरण में कम होता है और समान नहीं रह पाता। उत्तर भारत के सब्जी किसान बसंतकालीन फसल की अगेती बुवाई के लिए सामान्य से अधिक बीज-दर लेते हैं। कृषक अधिक आय की उम्मीद में समयपूर्व बुवाई करते हैं। गुणात्मक बीजों की बुवाई में उगाव प्रतिशत को बढ़ाने में बीज प्राइमिंग की प्रक्रिया कारगर पाई गई है।

महत्वपूर्ण मुद्दे

यदि किसी कारण से बुआई नहीं की जा सकती है, तो बीज प्राइमिंग बीजों को छाया में सुखाया जाना चाहिए और फिर एक साधारण बीज के रूप में बोया जाना चाहिए। बीज बर्बाद नहीं होते हैं, बीज भक्षण फायदेमंद नहीं है, लेकिन यह नुकसान नहीं पहुँचाता है।

यदि बुवाई के बाद खरपतवारों का उपयोग करना हो, तो बुवाई से पहले 2-3 दिनों के लिए खेतों में पानी से स्प्रे करें।

बुवाई के समय उर्वरक (नाइट्रेट, फॉस्फोरस) देना चाहिए।

2 लीटर पानी के लिए 3 ग्राम या 4 लीटर पानी के लिए 3 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट का उपयोग करके बीजारोपण को बढ़ावा दें।

बीज प्राइमिंग प्रक्रिया

बीज को साफ करें और उचित समय पर कमरे के तापमान में शुद्ध पानी में भिगोयें। उचित समय (बीजों को अंकुरित करने और भिगोने में लगने वाले समय का रिकॉर्ड रखते हुए) निर्धारित किया जाता है। बीज पर पाँच इंच से अधिक पानी नहीं होना चाहिए।

बीज को भिगोने के बाद सूखने के लिए एक कटोरे में रखें और सुखायें। यह छाया या ऊन को प्रभावित नहीं करता है। यह संभव है जब बीज को रासायनिक या जैविक बीज के

लिए संसाधित किया जाता है। (रोगनिरोधी घटकों का बीज बनाना चाहिए) हमेशा की तरह बीज बोना चाहिए।

बीज प्राइमिंग के प्रकार

- हेलो प्राइमिंग (नमक समाधान-NaCl का उपयोग)
- ओसमो प्राइमिंग (आसमाटिक समाधान का उपयोग - खूँटी)
- सोलिड मैट्रिक्स प्राइमिंग
- हाइड्रो प्राइमिंग (पानी का उपयोग बीज की मात्रा को दोगुना करता है)
- रेत मैट्रिक प्राइमिंग (नम रेत का उपयोग)

बीज प्राइमिंग के लाभ

- अंकुरण प्रतिशत को बढ़ाता है।
- अंकुरण की गति और समानता को बढ़ाता है।
- पानी और तापमान तनाव के प्रति प्रतिरोध में सुधार करता है।
- छोटे बीजों के लिए अत्यधिक उपयुक्त है।
- पैदावार बढ़ाता है।
- सूखी खरीफ और रबी फसलों के लिए बहुत उपयोगी है।

जोखिम

यदि बीज को लंबे समय तक भिगो कर रखे तो बीज बोने से पहले अंकुरण से निष्क्रिय हो जाता है और पूरे बीज बर्बाद हो जाते हैं। पानी का तापमान फसल के अनुसार बदलता रहता है। अनावश्यक रूप से गर्म पानी के उपयोग से बचें। पानी में क्लोरीन, ब्लीचिंग या अन्य रासायनिक कीटाणुनाशक का उपयोग न करें।

निष्कर्ष

बीज प्राइमिंग प्राथमिकता प्रदान करता है और परिस्थितियों में फसल के प्रदर्शन को बढ़ाने के लिए सबसे अच्छा विकल्प है। यह विभिन्न अवधारणाओं को सुधारता है और आगामी अंकुरण को सहायता प्रदान करता है। यह एक सस्ती तकनीक है, जो बीज के प्रदर्शन को अधिकतम करने के लिए उपयुक्त है, हालांकि यह नाजुक होने के कारण सतर्कता से की जानी चाहिए। बीज प्राइमिंग के लाभों को दोबारा प्रमुख बनाना और अस्थायी वातावरण और दुर्गम भूमि की व्यवस्था में इसका उपयोग आवश्यक है।

❖❖

ISSN No. 2583-3146

पब्लिशर्स : स्निग्धा हल्धर

सम्पादक : प्रो. (डॉ.) उमेश थापा

कवर एण्ड लेआउट : नीरज गुप्ता

प्रूफ रीडिंग : प्रखर खरे

टाइप सेटिंग : रजत श्रीवास्तव

प्रशासनिक और विपणन कार्यालय

3/3, डूमण्ट रोड नथानी हॉस्पिटल के पास, प्रयागराज-211001 (उ. प्र.)

मो. 9452254524

वेब : saahasindia.org

ईमेल - contact.saahas@gmail.com

स्क्रिप्शन : www.saahasindia.org/Magazine.php

पत्राचार कार्यालय

5, विवेकानन्द मार्ग, जानसेनगंज, प्रयागराज-211003 (यू.पी.)

ईमेल - krishiudyandarpan.en@gmail.com

●

© **प्रकाशक**

पब्लिशिड बाई

सोसाइटी फॉर एडवांसमेन्ट इन एग्रीकल्चर, हॉर्टिकल्चर एण्ड एलाइड सेक्टर (साहस),

प्रयागराज, (यू.पी.)

मुद्रक

एकेडेमी प्रेस, 845/602, दारागंज, प्रयागराज-211006

All right reserved. No part of this magazine can be printed in whole or in part without the written permission of the publisher.

The editors and publisher of this magazine do their best to verify the information published, but do not take any responsibility for the absolute accuracy of the information published.

All disputes subjects to Prayagraj (UP) Jurisdiction